मूल्यः ₹30

जुलाई–अगस्त 2024

आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

www.icar.org.in

पत्तेदार पानी पालक की किस्म 'काशी मनु' है लाभ से भरपूर

पानी पालक को आमतौर पर एक खाद्य फसल के रूप में उपयोग किया जाता है। पानी पालक की पत्तियां खनिज, विटामिन का एक अच्छा स्रोत हैं। इन्हें खाद्य प्रोटीन का भी संभावित स्रोत माना जाता है। इसमें कई औषधीय गुण भी होते हैं। पानी पालक फाइबर से भरपूर होता है और पाचन क्रिया में सहायक होता है। आयरन से भरपूर होने के कारण, यह एनीमिया से पीड़ित लोगों के साथ-साथ उन लोगों के लिए भी फायदेमंद है, जिन्हें अपने आहार में आयरन की आवश्यकता होती है।

पानी पालक के युवा पौधे के सभी भाग खाने योग्य होते हैं। इसे आमतौर पर जलभराव वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है। हालांकि, इस तरह की खेती के लिए पौधों की सुरक्षा के उपायों और कटाई के लिए जटिल प्रक्रियाओं की आवश्यकता होती है। यह मानव स्वास्थ्य के लिए, हानिकारक जल प्रदूषकों को भी आमंत्रित करता है।

जल पालक कलम (उपमार्ग) के माध्यम से इसे वर्षवार उगा सकते हैं। इसे ऊपरी क्षेत्र में उगाया जाता है। इसके उत्पादन के लिए जलीय स्थिति की आवश्यक नहीं है। यह उत्पाद जल प्रदूषकों से मुक्त होता है। यह प्रौद्योगिकी, सुरक्षित बायोमास का वादा करती है। इसे बीज और वनस्पति दोनों तरीकों से उगाया जा सकता है। इस प्रकार, पानी पालक, काशी मनु की खेती को उत्पादकों के बीच लोकप्रिय बनाना उनकी सामाजिक व आर्थिक समृद्धि के साथ-साथ पोषण सुरक्षा भी सुनिश्चित करती है।

प्रौद्योगिकी का प्रभाव

इस पहल द्वारा अपनाई गई खेती और प्रबंधन तरीकों से इस क्षेत्र में किसान की निर्भरता को बढ़ाने में वास्तविक रूप से मदद मिली है। इस प्रौद्योगिकी का मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, पंजाब, बिहार, झारखंड और उत्तर प्रदेश (वाराणसी - 2.2 हैक्टर, मिर्जापुर - 1.8 हैक्टर, चंदौली - 0.2 हैक्टर, सोनभद्र - 0.8 हैक्टर, गाजीपुर - 0.2 हैक्टर, मऊ - 0.2, जौनपुर - 0.6 हैक्टर, अयोध्या - 0.2 हैक्टर, बलिया - 0.4 हैक्टर, बांदा - 0.2 हैक्टर और कुशीनगर - 0.2 हैक्टर) में प्रदर्शन किया गया है। इसके साथ ही पोषण सुरक्षा के लिए किचन गार्डन/रूफ गार्डनिंग के लिए 1000 से अधिक परिवारों को पौधा रोपण सामग्री वितरित की गई।

सफल किसान

अलाउद्दीनपुर, वाराणसी के श्री प्रताप नारायण मौर्य जैसे प्रगतिशील किसान; चित्रकपुर, मिर्जापुर के श्री अखिलेश सिंह और कुट्टूपुर, जौनपुर के श्री सुभाष के पाल ने व्यावसायिक आधार पर इस फसल की खेती की है। इसमें पत्तेदार बायोमास

90-100 टन/हैक्टर तथा खेती की औसत लागत ₹1,40,000 से 1,50,000 हैक्टर है। इस पत्तेदार बायोमास का औसत बाजार मूल्य रु. 15-20 / किलोग्राम के बीच होता है।

इससे सालाना आय रु. 12,00,000 / - से लेकर 15,00,000 / हैक्टर तक प्राप्त होती है।

इस पहल ने, आस-पास के गांवों के अन्य किसानों के लिए पानी पालक का उत्पादन करने हेतु एक उत्प्रेरक के रूप में काम किया है। रोपण सामग्री की अच्छी मांग को देखते हुए यह आशा की जा रही है कि यह युवा किसानों के बीच उद्यमिता विकास में काफी सहायक सिद्ध होगी। यह फसल हरे चारे और आहार के लिए भी उपयुक्त है, साथ ही जैविक/प्राकृतिक खेती के लिए एक संभावित खाद्य फसल भी है

(स्रोत: भाकृअनुप की वेबसाईट से)

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी
वर्ष: 45, अंक: 4, जुलाई–अगस्त 2024

दूरभाष: 011–25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली–12
एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00
विशेषांक : रु. 100.00
E-mail : phalphul@gmail.com

विषय सूची

सब्जी
विशेषांक

विषय सूची

सब्जी उत्पादन का महत्व

देश में व्याप्त जलवायु विविधता के कारण अनेक प्रकार की बागवानी फसलों का विभिन्न क्षेत्रों में उत्पादन किया जाता है। संभवत: यही कारण है कि भारत का वैश्विक स्तर पर बागवानी फसलों के उत्पादन में चीन के बाद दूसरा स्थान है। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड द्वारा वर्ष 2023-24 के लिए प्रकाशित राष्ट्रीय बागवानी डेटाबेस (प्रथम अग्रिम अनुमान) के अनुसार देश में इस दौरान 209.39 मीट्रिक टन सब्जियों का उत्पादन 11.24 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल में किया गया। इसी प्रकार अगर बात करें वर्ष 2021 की खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) की एक रिपोर्ट की तो उसके अनुसार भारत अदरक एवं भिंडी का विश्व में शीर्ष उत्पादक है तथा आलू, प्याज, गोभी, बैंगन एवं बंदगोभी सरीखी सब्जियों के उत्पादन में दूसरे पायदान पर है।

सब्जी फसलों की विविधता के कारण ही विदेशों में भी बड़े पैमाने पर भारतीय ताजा सब्जियों की मांग में साल दर साल बढ़ोतरी देखने को मिल रही है। वर्ष 2022-23 के दौरान हमारे देश से 6925.83 करोड़ रुपये मूल्य की सब्जियों का विभिन्न देशों में निर्यात कर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की कमाई की गई। निर्यात की जाने वाली प्रमुख सब्जियों में प्याज, आलू, टमाटर तथा हरी मिर्च का उल्लेख किया जा सकता है। अमेरिका, संयुक्त राज्य अमीरात, बांग्लादेश, नेपाल, मलेशिया, नीदरलैंड, श्रीलंका, ब्रिटेन, कतर, ओमान तथा ईराक भारतीय सब्जियों के प्रमुख खरीददार देश हैं।

गौरतलब है कि वैश्विक बाजार में भारतीय सब्जियों की हिस्सेदारी लगभग 1 प्रतिशत है और इसमें वृद्धि की अपार संभावनाओं से इंकार नहीं किया जा सकता। ताजा सब्जियों की गुणवत्ता को बनाए रखते हुए इनको अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भेजने में कोल्ड स्टोरेज चेन के साथ त्वरित हवाई परिवहन की व्यवस्था को और चुस्त-दुरुस्त किया जाना अत्यंत आवश्यक है।

कृषि विशेषज्ञों की मानें तो सब्जी उत्पादन के बूते न सिर्फ देश के सकल घरेलू कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय बढ़ोतरी संभव है बल्कि कृषकों की आय में भी अच्छी-खासी वृद्धि की विपुल संभावनाएं हैं। विशेषकर परंपरागत फसलों की तुलना में सीमांत कृषकों के लिए सब्जी उत्पादन करना कहीं अधिक फायदे का विकल्प साबित हो सकता है। देश में बदलती खानपान की आदतों एवं स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूकता की वजह से सब्जी की मांग में निरंतर तेजी देखने को मिल रही है।

जलवायु परिवर्तन की वर्तमान परिस्थितियों में परंपरागत फसलों को अक्सर मौसम के बिगड़ते मिजाज का प्रकोप झेलना पड़ता है। सब्जी उत्पादन प्राय: कम अवधि में हो जाता है, इस कारण इन्हें प्राकृतिक विभीषिका से ज्यादा नुकसान होने की आशंका भी नहीं रहती। यहां यह बताना भी जरूरी है कि अन्य वाणिज्यिक फसलों की अपेक्षा सब्जी फसलों को अधिक जल तथा अन्य संसाधनों की जरूरत नहीं पड़ती है। इस प्रकार यह भी सब्जी की खेती का एक अन्य लाभ है कि प्राकृतिक संसाधनों पर अधिक दबाब नहीं पड़ता है। इतना ही नहीं जैव विविधता को संजोए रखने में भी इन्हें मददगार कहा जा सकता है। बेरोजगारी की समस्या झेलते भारत जैसे विकासशील देश में तो सब्जी की खेती का रकबा बढ़ाने का एक विशेष महत्व यह भी है कि सब्जी उत्पादन का कार्य श्रमिक प्रधान है और इसके जरिये रोजगार के नए अवसरों का सृजन ग्रामीण युवाओं के लिए संभव हो सकेगा।

सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि हेतु ढांचागत सुदृढ़ीकरण के साथ निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ाते हुए सब्जी उत्पादन के प्रति कृषकों को जागरूक बनाने के प्रयासों को अधिक प्रभावी एवं गतिशील बनाने की आवश्यकता है। कहने की जरूरत नहीं कि इस प्रकार देश की अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करने के साथ-साथ पोषण सुरक्षा की चुनौती का भी सफलतापूर्वक सामना किया जा सकता है।

इन्हीं सब बातों को धयान में रखते हुए आपकी अपनी लोकप्रिय पत्रिका **'फल फूल'** के इस अंक को **'सब्जी विशेषांक'** के तौर पर प्रकाशित किया जा रहा है। उम्मीद करते हैं कि पत्रिका में संजोए गए लेखों से सुधी पाठकों को सब्जी उत्पादन की दिशा में कदम उठाने के लिए प्रेरणा के साथ बहुमूल्य मार्गदर्शन भी मिल सकेगा।

(अशोक सिंह)

मटर की उन्नत खेती

आदित्य तिवारी* और **श्रेया तिवारी****

सब्जी विशेषांक

दलहनी सब्जियों में मटर का महत्वपूर्ण स्थान है। मटर की फसल से कम समय में अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है और यह भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ाने में भी सहायक होती है। हरी मटर, भारत में सबसे लोकप्रिय सब्जियों में एक है। पोषण से भरपूर इस सब्जी में पाचक प्रोटीन, शर्करा, विटामिन 'सी' तथा फॉस्फोरस प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। आजकल तो मटर को संरक्षित कर बाजार में सालभर बेचा जा रहा है। इसकी खेती मध्यप्रदेश में मुख्य रूप से सतना, सागर, रायसेन, ग्वालियर, टीकमगढ़, पन्ना, दमोह, मण्डला आदि जिलों में अधिक होती है। इसका उत्पादन बढ़ाने हेतु उन्नत तकनीक का प्रयोग आवश्यक है।

मटर की खेती सभी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है परन्तु दोमट और बलुई मिट्टी जिसका पीएच मान 6-6.5 हो, उत्पादन के लिए अच्छी मानी जाती है। खरीफ फसल की कटाई के बाद मिट्टी पलटने वाले यंत्र से गहरी जुताई करें। इसके पश्चात हल अथवा कल्टीवेटर या रोटावेटर से 2-3 बार जुताई कर खेत को पाटा लगाकर बराबर तथा भुरभुरा कर लेना चाहिए। अच्छे अंकुरण के लिये भूमि में नमी का होना आवश्यक है। यदि खेत में दीमक, तना मक्खी एवं लीफ माइनर का प्रकोप हो तो अंतिम जुताई के बाद फोरेट 10जी, 10-12 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से मिलाकर बुआई करनी चाहिए।

उपयुक्त प्रजातियां: जे.एम.6, प्रकाश, केपीएमआर 400, आईपीएफडी 99-13, आईपीएफडी 1-10, आईपीएफडी 99-25 प्रमुख प्रजातियां हैं।

बीज दर, दूरी और बुआई: बुआई हेतु मध्य अक्तूबर से मध्य नवम्बर का समय उपयुक्त रहता है। बीजों के आकार और बुआई के समय के अनुसार बीज दर अलग-अलग हो सकती है। मटर की बुआई पक्तियों में नाली हल, सीडड्रिल, सीड कम फर्टीड्रिल से करनी चाहिए। समय पर बुआई हेतु 70 से 80 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर जबकि पछेती बुआई हेतु 90 किलोग्राम प्रति हैक्टर बीज का प्रयोग पर्याप्त रहता है। देसी हल या सीडड्रिल से 30 सें.मी. की दूरी पर बुआई करनी चाहिए। बीज की गहराई 5 से 7 सें.मी. रखें। जबकि बौनी किस्म हेतु 100 किलोग्राम प्रति हैक्टर बीज का प्रयोग करना चाहिए। मटर को गेहूं और जौ के साथ अंत: फसल के रूप में भी बोया जाता है। हरे चारे के रूप में जई और सरसों के साथ इसे बोया जाता है।

बीजोपचार: उचित राइजोबियम संवर्धक कल्चर से बीजों को उपचारित करना

रोग प्रबंधन

भभूतिया रोग: इस रोग से पत्तियों एवं शाखाओं पर सफेद चूर्ण जैसा पदार्थ दिखाई देने लगता है। रोग के नियंत्रण हेतु बीजोपचार थीरम एवं कार्बेण्डाजिम और घुलनशील सल्फर या मैंकोजब का पर्णीय छिड़काव अनुशंसा अनुसार करना चाहिए। दवा की व्यापारिक मात्रा 2.1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार और 1 से 1.5 ग्राम प्रति लीटर या 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। बुआई के समय बीजोपचार और खड़ी फसल में रोग के लक्षण परिलक्षित होने पर 500 लीटर पानी का प्रति हैक्टर की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

चांदनी रोग: इस रोग से पौधों पर एक सें.मी. व्यास के बड़े-बड़े गोल बादामी और गाढ़े दाग आ जाते हैं। तने पर घेरा बनाकर यह रोग पौधे को नष्ट कर देता है। रोगरहित बीज की बुआई करें। इसके लिए 3 ग्राम थीरम दवा प्रति किग्रा की दर से मिलाकर बीजोपचार करें।

रतुआ: इस रोग के कारण जमीन के ऊपर के पौधे के सभी अंगों पर हल्के से चमकदार पीले फफोले नजर आते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर ये और अधिक होते हैं। रोगी पत्तियां मुरझाकर गिर जाती हैं। अंत में पौधा सूखकर मर जाता है। इसकी रोकथाम के लिए अवरोधी प्रजाति का प्रयोग करना चाहिए।

*ग्रामीण कृषि विस्तार अधिकारी, किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग,सतना, म.प्र.; **एमएससी छात्रा (कृषि प्रसार), म.गां.चि.ग्रा.वि., चित्रकूट, सतना, म.प्र.

चाहिए। बीजजनित रोगों के उपचार हेतु मटर की फसल में फंफूदनाशक दवा थीरम एवं कार्बेण्डाजिम और रसचूसक कीटों से बचाव के लिए थायोमिथाक्जाम 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर का प्रयोग करना चाहिए। इसके बाद वायुमण्डलीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण के लिये राइजोबियम लेग्यूमीनोसोरम और भूमि में अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील अवस्था में परिवर्तन करने हेतु पीएसबी कल्चर 5 से 10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

मटर की पौध

उर्वरक का प्रयोगः फसल में मिट्टी परीक्षण के आधार पर बुआई के समय अनुशंसित उर्वरक का प्रयोग करना चाहिये। ऊंचाई वाली किस्म में नाइट्रोजन 20, फॉस्फोरस 40 एवं पोटाश 40 तथा सल्फर 20 किलो ग्राम प्रति हैक्टर एवं बौनी किस्म में उर्वरक की मात्रा (प्रति किलोग्राम) प्रति हैक्टर नाइट्रोजन 20, फॉस्फोरस 50 एवं पोटाश 50 तथा सल्फर 20 का प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाईः प्रारंभ में मिट्टी में नमी और शीत ऋतु की वर्षा के आधार पर 1-2 सिंचाइयों की जरूरत पड़ती है। प्रथम सिंचाई फूल आने के समय एवं दूसरी फलियां बनने के समय हल्की सिंचाई, स्प्रिंक्लर से करनी चाहिए। फसल में पानी ठहरा न रहे इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रणः खरपतवार पोषक तत्वों व जल को ग्रहण कर फसल को कमजोर करते हैं और उपज को नुकसान पहुंचाते हैं। इससे फसल की उत्पादकता प्रभावित होती है। निराई अथवा खरपतवार नियंत्रण से फसल के जड़क्षेत्र में वायु संचार बढ़ जाता हैं और पौधे में शाखाओं का उत्पादन बढ़ जाता है।

कीट प्रबंधन

माहूः ये कीट मटर की फसल को काफी नुकसान पहुंचाते हैं। ये कीट पत्ती, फूल एवं फलियों से रस चूसते हैं तथा जहरीले तत्व भी छोड़ देते हैं। अधिक प्रकोप होने पर फलियां सूख जाती हैं। इसके नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोरोप्रिड 17.8 एसएल, दवा की व्यापारिक मात्रा 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। कीट का प्रकोप बढ़ने पर 500 लीटर पानी प्रति हैक्टर की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

स्टेम फ्लाई एवं लीफ माइनरः ये कीट, तना एवं पत्ती का रस चूसते हैं। इनके नियंत्रण हेतु फोरेट 10 जी अनुशंसित दवा का प्रयोग करें। मृदा का उपचार 10 कि.ग्रा. प्रति

स्वस्थ मटर

हैक्टर की दर से खेत की तैयारी के समय करना चाहिए।

फली छेदकः ये कीट फली में छिद्र कर हानि पहुंचाते हैं। इनके नियंत्रण हेतु प्रोफेनोफॉस 50 ईसी का प्रयोग करना चाहिए। अगेती फसल की अपेक्षा पछेती फसल में इसका प्रकोप अधिक होता है। रोकथाम हेतु व्यापारिक मात्रा 1.5 मि.ली. लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। कीट का प्रकोप अधिक होने पर 500 लीटर पानी प्रति हैक्टर की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

कटाई, गहाई एवं भण्डारणः मटर की फसल सामान्यतः 130 से 150 दिनों में पकती है। फसल की परिपक्वता के बाद मटर की कटाई करनी चाहिए। फसल की 5 से 7 दिनों तक धूप में सुखाने के बाद गहाई करनी चाहिए। बीजों का भण्डारण मटर के अच्छी तरह से सूख जाने पर सुरक्षित स्थान पर करना चाहिए। भण्डारण के दौरान कीटों से सुरक्षा के लिए एल्यूमिनियम फॉस्फाइड का उपयोग करना चाहिए। उन्नत कृषि कार्य प्रबंधन से 20 से 25 क्विंटल उपज प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है। ■

सफलता गाथा

'ब्रोकोली की जैविक खेती' से कृषक महिला की सफलता

श्रीमती ओटोक नोपी टैग्गू जी एक खेतिहर महिला हैं। ये अरुणाचल प्रदेश के ऊपरी सियांग जिले की निवासी हैं। श्रीमती ओटोक ने स्कूल की पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी थी। इन्होंने पिछले 10-15 वर्षों से विभिन्न कृषि एवं बागवानी फसलों की खेती सफलतापूर्वक की है और स्वयं को जिले में एक जानी-मानी प्रगतिशील खेतिहर महिला के रूप में स्थापित किया है। केवीके, ऊपरी सियांग के मार्गदर्शन के साथ इन्होंने पिछले ढाई वर्षों से ब्रोकोली की जैविक खेती करनी शुरू की। इससे इनकी आय कई गुना बढ़ गई। इन्होंने केवीके, ऊपरी सियांग, अरुणाचल प्रदेश द्वारा ब्रोकोली की कृषि विधियों पर आयोजित एक प्रशिक्षण प्राप्त किया और इसकी नर्सरी तैयार करने पर प्रदर्शन में भाग लिया। इन्हें प्रोत्साहित करने और सहायता प्रदान करने के लिए केवीके ने अन्य सामग्रियों के साथ ब्रोकोली किस्म (सोलन ग्रीन) के बीज दिये। वैज्ञानिकों द्वारा श्रीमती ओटोक के खेत का नियमित दौरा किया गया एवं उचित रूप से निगरानी कर उन्हें उचित परामर्श दिये गये। इन्होंने जैविक कृषि विधियों के साथ एक हैक्टर क्षेत्रफल में विदेशी सब्जी ब्रोकोली की खेती की। इससे इन्होंने 5,000 कि.ग्रा. की उपज प्राप्त की और 3.35 बीसीआर के साथ 1.74 लाख रुपये का शुद्ध लाभ कमाया। इन्होंने 50 रुपये प्रति कि.ग्रा. के मूल्य पर ब्रोकोली को बेचा और पत्तियों को 20 रुपये प्रति गुच्छे की दर से बेचा। श्रीमती ओटोक ने बताया कि बेहतर उत्पादन के फलस्वरूप उनकी आय बढ़ गई है। न केवल ब्रोकोली का स्वाद बहुत अच्छा है बल्कि इसके कई स्वास्थ्यवर्धक लाभ भी हैं। अतः बाजार में ब्रोकोली की मांग भी निरंतर बढ़ रही है। इससे पता चलता है कि ब्रोकोली की अरुणाचल प्रदेश के ऊपरी सियांग जिले में खेती करने की संभावनाएं है, क्योंकि यह आर्थिक रूप से लाभप्रद है और इससे कृषक आर्थिक रूप से समृद्ध हो सकते हैं। ■

जैविक खेती से उत्पादित ब्रोकोली

(स्रोतः भाकृअनुप वार्षिक रिपोर्ट 2022-23)

संकर मिर्च की बेहतर उपज

एस. के. त्यागी*

मिर्च, भारत की प्रमुख मसाला फसल है। इसका उपयोग हरी एवं लाल दोनों अवस्थाओं में किया जाता है। मिर्च का वानस्पतिक नाम *कैप्सिकम एनम एल.* है। यह सोलेनेसी कुल के अंतर्गत आती है। इसका उद्भव स्थान दक्षिण अमेरिका माना जाता है। मिर्च में तीखापन इसमें पाये जाने वाले अवयव कैप्सेसिन के कारण होता है। इसका उपयोग मसाला, चटनी, अचार एवं सॉस बनाने में किया जाता है। मिर्च से प्राप्त कैप्सेसिन एवं ओलियोरेसिन का उपयोग विभिन्न उद्योगों में किया जाता है। भारत, विश्व में मिर्च का सबसे बड़ा उत्पादक, उपभोक्ता एवं निर्यातक देश है। देश में 751.61 हजार हैक्टर क्षेत्र में मिर्च की खेती की जाती है, जिससे 2149.23 हजार मीट्रिक टन उत्पादन प्राप्त होता है।

भारत में मिर्च की औसत उत्पादकता 2.86 मीट्रिक टन प्रति हैक्टर है (हॉर्टिकल्चर स्टेटिस्टिक्स एट ए ग्लांस 2018)। देश में आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश एवं ओडिशा प्रमुख मिर्च उत्पादक राज्य हैं। भारत से वर्ष 2017-18 में 22,074.05 लाख रुपये की 44.90 हजार मीट्रिक टन मिर्च अन्य देशों को निर्यात की गई थी। मध्यप्रदेश में 90.98 हजार हैक्टर में मिर्च की खेती की जाती है जिससे 244.55 हजार मीट्रिक टन उत्पादन प्राप्त होता है। मध्य प्रदेश में मिर्च की औसत उत्पादकता 2.69 मीट्रिक टन प्रति हैक्टर है (हॉर्टिकल्चर स्टेटिस्टिक्स एट ए ग्लांस 2018)।

जलवायु

मिर्च की खेती के लिये आर्द्र उष्ण जलवायु उपयुक्त होती है। फल के परिपक्व अवस्था में आने के लिए शुष्क मौसम की आवश्यकता होती है। ग्रीष्म ऋतु में अधिक तापमान से फल व फूल झड़ते हैं। रात्रि तापमान 16 से 21 डिग्री सेल्सियस फल बनने के लिए उपयुक्त होता है। मिर्च की खेती के लिये 15-35 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा गर्म आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है।

मृदा

मिर्च की खेती सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है परंतु अच्छे जल निकास वाली हल्की दोमट मिट्टी जिसका पीएच मान 6.0 से 7.5 हो, इसकी खेती के लिये सबसे उपयुक्त है। ऐसी मृदा जिनमें जल निकास की समुचित व्यवस्था नहीं होती, मिर्च की खेती के लिये अनुपयुक्त होती है।

काशी सुर्ख

इस संकर किस्म के पौधे लम्बी बढ़वार वाले होते हैं। पौधा लगभग 70-100 सें.मी. लम्बा एवं सीधा होता है। फल 10-12

काशी अर्ली

इस संकर किस्म के पौधे 60-75 सें.मी. लम्बे तथा छोटी गांठों वाले होते हैं। फल 7-8 सें.मी. लम्बे, सीधे, 1 सें.मी. मोटे तथा गहरे होते हैं। पौध रोपण के मात्र 45 दिनों में प्रथम तुड़ाई प्राप्त हो जाती है। यह सामान्य संकर किस्मों से लगभग 10 दिनों पहले होती है। इस संकर के फलों की तुड़ाई 6-8 दिनों के अंतराल पर मिलती रहती है। इससे लगभग 10-12 तुड़ाई आसानी से ली जा सकती है। हरे फल का उत्पादन 300-350 क्विंटल/हैक्टर प्राप्त हो जाता है। इनकी फसल लम्बी अवधि तक चलती रहती है। यह संकर किस्म उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, झारखंड, उत्तरांचल, कर्नाटक, दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, आंध्र प्रदेश और छत्तीसगढ़ के लिए अनुशंसित है।

*भाकृअनुप-वैज्ञानिक (उद्यान विज्ञान), कृषि विज्ञान केंद्र, खरगोन (म.प्र.)

सें.मी. लम्बे, हल्के हरे, सीधे तथा 1.5-1.8 सें.मी. मोटे होते हैं। प्रथम तुड़ाई पौध रोपण के 50-55 दिनों बाद मिल जाती है। यह किस्म सूखे एवं लाल फल दोनों प्रकार के लिए उत्तम होती है। हरे फल का उत्पादन 240 क्विंटल/हैक्टर एवं लाल सूखी मिर्च का 40 क्विंटल/हैक्टर की दर से प्राप्त होता है। यह चूषक कीटों एवं विषाणु गुरचा के प्रति सहनशील है। यह संकर पश्चिम बंगाल, असोम, पंजाब, उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र, बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा, अरुणाचल प्रदेश, राजस्थान, गुजरात और हरियाणा के लिए अनुशंसित है।

अर्का मेघना

यह किस्म आईएचआर 3905 (सीजीएमएस) × आईएचआर 3310 के संकरण का एफ$_1$ संकर है। यह एक अगेती किस्म है। फल गहरे हरे और परिपक्व होने पर गहरे लाल होते हैं। यह विषाणुओं और चूषक कीटों के प्रति सहनशील है। इस किस्म की औसत उपज 557 क्विंटल प्रति हैक्टर (हरी मिर्च) या 50 क्विंटल प्रति हैक्टर (सूखी मिर्च) है। यह संकर पंजाब, यूपी के तराई क्षेत्र, बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा, अरुणाचल प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, हरियाणा, दिल्ली, कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल के लिए अनुशंसित है।

अर्का सानवी (एच 19)

यह संकर हरे एवं लाल फल दोनों की खेती के लिए उपयुक्त है। इस संकर का पौधा मध्यम लम्बा और फैला हुआ होता है। फल लटकता हुआ, 7.8 ×1-1.2 सें.मी. आकार, मध्यम तीखा (50000-60,000 SHU), हरा और पकने पर लाल हो जाता है (80-90 ASTA) परिपक्वता पर, मध्यम झुर्रीदार होता है। यह मिर्च लीफ कर्ल विषाणु के लिए प्रतिरोधी है। इस संकर की औसत उपज क्षमता 250 क्विंटल हरी मिर्च प्रति हैक्टर है।

अर्का श्वेता

यह किस्म आईएचआर 3903 (सीजीएमएस वंश) × आईएचआर 3315 के संकरण का एफ$_1$ संकर है। इसके फल 11-12 सें.मी. लम्बे एवं 1.2-1.5 सें.मी. चौड़े, चिकने, हल्के हरे रंग के और पकने पर लाल रंग के होते हैं। यह किस्म सिंचित अवस्था में खरीफ एवं रबी मौसम में लगाने के लिए उपयुक्त है। यह किस्म

लाल मिर्च का व्यवसायिक महत्व

विषाणु रोग के प्रति सहनशील है। इसकी औसत उपज हरी मिर्च 350 क्विंटल प्रति हैक्टर या सूखी मिर्च 50 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह संकर किस्म पंजाब, यूपी के तराई क्षेत्र, बिहार, झारखंड, राजस्थान, गुजरात, हरियाणा, दिल्ली, कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल के लिए अनुशंसित है।

अर्का हरिता

यह किस्म आईएचआर 3905 (सीजीएमएस) × आईएचआर 3312 के संकरण का एफ$_1$ संकर है। इस संकर के पौधे लम्बे एवं सीधी बढ़वार वाले होते हैं। पत्तियां मध्यम आकार की, फल 6-8 सें.मी. लम्बे, पतले एवं हरे रंग की होती हैं। पौध रोपण के 50-55 दिनों बाद प्रथम तुड़ाई प्राप्त हो जाती है। इसकी औसत उपज, हरी मिर्च 350-380 क्विंटल प्रति हैक्टर या सूखी मिर्च 50-55 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह हरे फल उत्पादन के लिए एक उत्तम किस्म है। यह पाउडरी मिल्ड्यू और विषाणुओं के प्रति सहनशील है। यह संकर किस्म कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल के लिए अनुशंसित है।

अर्का ख्याति

यह किस्म सीएमएस आधारित उच्च उपज वाला और ताजा बेचने के लिए विकसित एफ$_1$ संकर है। इसके फल 12×1 सें.मी. आकार के, हल्के हरे और परिपक्व होने पर गहरे लाल, मध्यम तीखे, चिकने और सुखाने पर झुर्रीदार होते हैं। यह सीएमवी के प्रति सहनशील है। इसकी औसत उपज हरी मिर्च 400-450 क्विंटल प्रति हैक्टर या सूखी मिर्च 50-55 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

अर्का गगन (एच 30)

इस संकर के पौधे लम्बे और फैलने वाले, फल खड़े होते हैं। फल 7.5-8.5 × 1-1.1 सें.मी. आकार के दृढ़, अत्यधिक तीखे (1-1.2 लाख SHU), रंग हरा, मध्यम झुर्रीदार होते हैं। यह संकर जड़ ग्रंथि (नेमेटोड) और उकठा रोग के प्रति सहनशील एवं मिर्च लीफ कर्ल विषाणु के लिए प्रतिरोधी है। इस संकर की औसत उपज क्षमता 250 क्विंटल हरी मिर्च प्रति हैक्टर है।

अर्का तन्वी (एच 45)

इस संकर किस्म के पौधे लम्बे और फैलने वाले होते है। फल लटके हुए, 9-10 × 1-1.1 सें.मी. आकार के, मध्यम तीखे (60000-65,000 SHU), हरे और परिपक्व होने पर गहरे लाल (90-100 ASTA), सूखने पर झुर्रीदार होते हैं। यह संकर जड़ ग्रंथि (नेमाटोड) और भभूतिया रोग के प्रति सहनशील एवं मिर्च लीफ कर्ल विषाणु के लिए प्रतिरोधी है। इस संकर की औसत उपज क्षमता 250 क्विंटल हरी मिर्च प्रति हैक्टर है।

अर्का यशस्वी (एच 8)

यह संकर किस्म लाल सूखी मिर्च की खेती के लिए उपयुक्त है। इस संकर के पौधे लम्बे और फैलने वाले, फल लटके हुए, 9-10 × 1.2-1.4 सें.मी. आकार के, मध्यम तीखे (40000-50000 SHU) हरे और परिपक्वता पर गहरे लाल (90-100 ASTA), मध्यम झुर्रीदार होते हैं। यह संकर जड़ग्रंथि नेमेटोड और भभूतिया रोग के प्रति सहनशील एवं मिर्च लीफ कर्ल विषाणु के लिए प्रतिरोधी है। इस संकर की औसत उपज क्षमता 75-85 क्विंटल लाल सूखी मिर्च प्रति हैक्टर है।

तुड़ाई उपरांत मिर्च

अर्का तेजस्वी (एच 41)

यह संकर किस्म छोटी लाल सूखी मिर्च (तेजा) की खेती के लिए उपयुक्त है। इस संकर के पौधे मध्यम लम्बे और फैले हुए होते हैं। फल 7.8 ×1-1.1 सें.मी. आकार के लटके हुए अत्यधिक तीखे (90000-95000 SHU), हरे और पकने पर गहरे लाल हो जाते हैं। परिपक्वता पर फल मध्यम झुर्रीदार होते हैं। यह संकर भभूतिया रोग के प्रति सहनशील एवं मिर्च लीफ कर्ल विषाणु के लिए प्रतिरोधी है। इस संकर की औसत उपज क्षमता 75-85 क्विंटल लाल सूखी मिर्च प्रति हैक्टर है।

खेत की तैयारी

रबी फसल की कटाई के बाद अप्रैल माह में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी

जुताई करें। इसके एक माह बाद रोटावेटर या कल्टीवेटर चलाकर खेत को तैयार करें। ढेला रहित और भुरभुरी मिट्टी वाले खेत, मिर्च उत्पादन के लिये उत्तम होते हैं। खेत में पानी भरने से मिर्च की फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अत: अधिक उत्पादन के लिये खेत में जल निकास की व्यवस्था करना आवश्यक होता है। यदि मिर्च में ड्रिप सिंचाई का उपयोग करना हो तो रोपाई के लिए 120 सें.मी. के अंतराल पर 60 सें.मी. चौड़ी एवं 30 सें.मी. ऊँची क्यारियां तैयार करें।

खेत में मिर्च की फसल

रोपाई

मिर्च की मुख्य फसल खरीफ मे तैयार की जाती है। इसकी रोपाई जून-जुलाई में की जाती है। शरद ऋतु की फसल की रोपाई सितम्बर-अक्टूबर में की जाती है। रोपाई के 35 दिनों पूर्व बीजों की बुआई कर पौध तैयार करें। नर्सरी में बीज की बुआई के 35 दिनों बाद पौधे रोपने लायक हो जाते हैं। संकर किस्मों के लिए पंक्ति की दूरी 120 सें.मी. और पौधे से पौधे की दूरी 30 से 40 सें.मी. रखें। रोपाई के पूर्व पौध को इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एसएल 0.3 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल में 30 मिनट पौध की जड़ों को डुबोने के बाद खेत में रोपाई करें। साथ ही मिर्च के खेत के चारों ओर मक्का या ज्वार की 2-3 पंक्तियां लगाएं।

प्लास्टिक पलवार का उपयोग

मिर्च फसल की आधुनिक खेती में सिंचाई के लिए ड्रिप पद्धति के साथ-साथ 30 माइक्रॉन मोटाई वाली सिल्वर काले रंग की प्लास्टिक मल्चिंग शीट का प्रयोग किया जाता है। इससे खरपतवार प्रबंधन के साथ-साथ सिंचाई जल की मात्रा में भी कमी आती है। इससे मिर्च में रस चूषक कीट का प्रकोप कम होता है और उपज में 40 से 50 प्रतिशत की वृद्धि पाई गई है।

प्लास्टिक पलवार

फर्टिगेशन तकनीक से पोषक तत्व प्रबंधन

मिर्च में खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें। ड्रिप द्वारा उर्वरकों का उपयोग करने की तकनीक को फर्टिगेशन विधि कहते हैं। इस विधि में फर्टिलाइजर टैंक या वेंचुरी के माध्यम से पानी मे घुलनशील उर्वरकों का उपयोग करते हैं। सामान्यत: मिर्च की रोपाई के पूर्व 100 क्विंटल गोबर की पूर्णत: पकी हुई खाद एवं 1 क्विंटल नीम खली प्रति एकड़ खेत की अंतिम जुताई के समय मृदा में मिलाएं। इसके साथ ही रोपाई के पूर्व क्यारी में 20 कि.ग्रा. गोबर की खाद में 2 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा विरडी, 1 कि.ग्रा. एजोस्पिरिलम और 1 कि.ग्रा. फॉस्फोबैक्टीरिया प्रति एकड़ मिलाएं।

यदि मृदा में जिंक की कमी हो तो जिंक सल्फेट 10 किलोग्राम प्रति एकड़ खेत की अंतिम जुताई के समय मृदा में मिलाएं। इसके अतिरिक्त मिर्च की फसल को 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 32 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं 32 किलोग्राम पोटाश प्रति एकड़ की दर से आवश्यकता होती है। इसमें फॉस्फोरस की 75 प्रतिशत मात्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट के माध्यम से पौध की रोपाई के पूर्व खेत में मिला दें एवं नाइट्रोजन, पोटाश की पूरी मात्रा एवं फॉस्फोरस की शेष मात्रा ड्रिप द्वारा घुलनशील उर्वरकों जैसे 19:19:19, 00:52:34, 13:00:45, 12:61:00, 0:0:50, यूरिया, अमोनियम सल्फेट, एवं म्यूरेट ऑफ पोटाश के माध्यम से 2 कि.ग्रा. प्रति एकड़ सप्ताह में दो बार दें।

द्वितीयक पोषक तत्व कैल्शियम, मैग्नीशियम एवं सल्फर के लिए कैल्शियम नाइट्रेट एवं मैग्नीशियम सल्फेट 4 कि.ग्रा. प्रति एक माह में एक बार एवं बोरॉन 500 ग्राम प्रति एकड़ एवं सूक्ष्म पोषक तत्व 250 ग्राम प्रति एकड़ माह में एक बार ड्रिप के माध्यम से दें। पौध रोपण के 40 दिनों बाद से 10 दिनों के अंतराल पर जिंक सल्फेट ($ZnSO_4$) / 0.5 प्रतिशत का पर्णीय छिड़काव करें एवं रोपण के 60 दिनों के बाद 19:19:19 Mn / 1 प्रतिशत का छिड़काव करें।

सिंचाई प्रबंधन

पौध रोपण के तुरंत बाद हल्की सी सिंचाई करनी चाहिए। गर्मी के दिनों में 5 से 7 दिनों के अंतर से तथा शरद ऋतु में 10 से 15 दिनों के अंतर से सिंचाई करनी चाहिए। ड्रिप द्वारा सिंचाई मृदा के प्रकार, मृदा में नमी की मात्रा, मौसम एवं फसल की अवस्था के अनुसार प्रतिदिन या एक दिन छोड़कर की जा सकती है।

खरपतवार प्रबंधन

सामान्यत: मिर्च में पहली निराई-गुड़ाई 20-25 तथा दूसरी 35-40 दिनों बाद करें या डोरा या कोलपा चलायें। हाथ से निराई या डोरा/कोलपा को ही प्राथमिकता दें। प्लास्टिक मल्च का उपयोग करने से खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ मृदा नमी का भी संरक्षण होता है।

खरपतवाररहित उपज

उपज क्षमता

उच्च तकनीक से खेती करने पर संकर किस्मों से 100-125 क्विंटल हरी मिर्च या 20-25 क्विंटल लाल सूखी मिर्च प्रति एकड़ प्राप्त हो सकती है। मिर्च की उपज मौसम, किस्म एवं फसल प्रबंधन के अनुरूप कम या अधिक हो सकती है।

गुच्छे में लटके पुष्ट फल

पौध वृद्धि नियंत्रकों का उपयोग

मिर्च में रोपाई के 25, 45 एवं 65 दिनों बाद ट्राईकॉन्टानॉल 0.05% ईसी 100 मि.ली. प्रति एकड़ 200 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करें। मिर्च में पुष्प एवं फलों को झड़ने से रोकने एवं पुष्पण एवं फलन की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने के लिए नेप्थालीन एसिटिक एसिड (NAA) 4.5 प्रतिशत 10 पीपीएम (10 मि.ग्रा. प्रति 10 लीटर पानी) में घोलकर पुष्पण के समय एवं 20 दिनों बाद छिड़काव करें। ■

पत्तागोभी का बीजोत्पादन

अभिषेक बहुगुणा*, निर्मला भट्ट* और **जी.एस. बिष्ट***

भारत में शरदऋतु में उगाई जाने वाली सब्जियों में पत्तागोभी का विशेष स्थान है। इसकी खेती विभिन्न ऋतुओं में लगभग पूरे वर्ष की जाती है। इसमें खनिज, विटामिन ए, बी$_1$ व सी अधिक मात्रा में पाया जाता है। पत्तागोभी का बीजोत्पादन पर्वतीय क्षेत्रों में 1800 से 3000 मीटर की ऊँचाई पर सफलतापूर्वक किया जा सकता है। अच्छी गुणवत्ता वाली किस्मों के बीजोत्पादन के समय बीज की शुद्धता व गुणवत्ता बनाए रखने हेतु तकनीकी ज्ञान का होना आवश्यक है।

पत्तागोभी की फसल हेतु 15 से 20 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। यह पर्वतीय क्षेत्रों में ऊँचाई अनुसार अलग-अलग समय में होती है। पत्तागोभी के पौधों में फूल बनने के लिए कम से कम डेढ़ से दो माह तक 5 से 10 डिग्री सेल्सियस तापक्रम का मिलना अति आवश्यक है अगर यह तापक्रम लम्बी अवधि तक मिलता है तो पौधे में जल्दी फूल बनते हैं। इसके विपरीत यदि तापक्रम अधिक हो तो पौधे वानस्पतिक अवस्था में ही रह जाते हैं।

भूमि

अच्छे जलधारण एवं जल निकास वाली भूमि, पत्तागोभी के बीजोत्पादन हेतु सर्वोत्तम होती है। पौधों की अच्छी बढ़वार के लिए मृदा का पी.एच. मान 5.5 से 6.5 होना चाहिए।

भूमि की तैयारी

पत्तागोभी के अच्छे उत्पादन हेतु खेत में एक गहरी व एक हल्की जुताई करनी चाहिए। इसके बाद खेत को छोटी-छोटी क्यारियों में विभाजित करते हैं। मिट्टी में लगने वाले फफूंद रोगों की रोकथाम हेतु ट्राइकोडर्मा जैविक फफूंदीनाशक से भूमि शोधन करना चाहिए।

पॉलीहाउस में बीजोत्पादन

पत्तागोभी पौधशाला पर प्रशिक्षण

बीज स्रोत व उपचार

पत्तागोभी का सफल बीजोत्पादन करने हेतु सही स्रोत से ही बीज प्राप्त करने चाहिए, जिससे उसकी शुद्धता बनाए रखना आसान रहे। इसके साथ ही अच्छी अंकुरण क्षमता के साथ बीज कवकनाशी रसायनों से शोधित होना चाहिए। प्रजनक आधारीय बीज किसी सरकारी संस्था व कृषि विश्वविद्यालय से प्राप्त करना चाहिए।

उन्नत किस्में

अगेती किस्में (सितम्बर माह): अर्ली ड्रम हैड, प्राइड ऑफ इण्डिया, गोल्डन एकड़, पूसा मुक्ता, क्रांति आदि प्रमुख हैं।

मध्यम व पछेती किस्में (अक्तूबर माह): क्विस्टो, पूसा ड्रम हैड, लेट लार्ज ड्रम हैड, लेट ड्रम हैड, एक्सप्रेस, हाइब्रिड 10, सलेक्शन 8 आदि प्रमुख हैं।

पत्तागोभी के व्यावसायिक व सफल बीज उत्पादन की दृष्टि से गोल्डन एकड़ तथा ग्रीन एक्सप्रेस दो प्रमुख किस्में हैं। इनमें फल का औसत वजन 750 से 1000 ग्राम तक होता है।

बीज दर एवं नर्सरी प्रबंधन

पत्तागोभी की अच्छी पौध तैयार करने के लिए पौधशाला खुले स्थान पर बनानी चाहिए तथा प्रत्येक वर्ष पौधशाला तैयार करने के लिए नये स्थान का चयन करना चाहिए। कैप्टॉन नामक रसायन के 0.3 प्रतिशत के घोल से 5 लीटर प्रति वर्ग मीटर की दर से पौधशाला लगाने हेतु चयनित की गयी भूमि को उपचारित करना चाहिए। बीजों को पंक्तियों में 5 से 6 सें.मी. की दूरी पर 1.0 से 1.5 सें.मी. की गहराई में लगाते है।

पौधशाला की क्यारियां एक मीटर से अधिक चौड़ी नहीं होनी चाहिए तथा ये जमीन से 10 से 15 सें.मी. ऊंची होनी चाहिए। पौधशाला हेतु एक नाली क्षेत्र में 10 से 12 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है तथा रोपाई करने के लिए 5 से 6 वर्ग मीटर पौध क्षेत्र पर्याप्त होता है। पौधशाला में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई व सिंचाई करते रहना चाहिए तथा तैयार की गयी पौध 4 से 5 सप्ताह में रोपाई के योग्य हो जाती है।

पौध रोपण

पत्तागोभी के बीज उत्पादन के लिए

*कृषि विज्ञान केन्द्र, गैंना एंचोली, पिथौरागढ़, उत्तराखण्ड-262530

पत्तागोभी पौध रोपण

पौध रोपण हेतु पौध से पौध की दूरी 60 सें.मी. तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सें.मी. रखते हैं। इससे अच्छा व गुणकारी शुद्ध बीज प्राप्त किया जा सकता है।

खाद तथा उर्वरक

बेहतर बीजोत्पादन के लिए 4 से 5 क्विंटल सड़ी हुई गोबर की खाद, 2.5 कि.ग्रा. डी.ए.पी., 3 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश एक नाली क्षेत्र के लिए पर्याप्त होती है। गोबर की खाद, डी.ए.पी. तथा पोटाश की पूरी मात्रा तथा यूरिया की 1/3 मात्रा पौध रोपण से पहले अन्तिम जुताई के समय मिट्टी में मिला देनी चाहिए। यूरिया की बची आधी मात्रा रोपाई से 25 से 30 दिनों बाद तथा शेष भाग को फूल की शाखायें फूटते समय भूमि में मिला देना चाहिए।

पृथक्करण

पत्तागोभी एक परसेचित फसल है प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए पत्तागोभी की दो किस्मों या गोभीवर्गीय फसलों के खेतों के बीच की दूरी कम से कम 1.5 कि.मी. रखनी चाहिए।

कटाई

पत्तागोभी की फलियां जब हल्के हरे रंग की हो जाएं तो उन्हे टहनियों से अलग कर लेना चाहिए।

मड़ाई

कटी हुई टहनियों को 4 से 5 दिनों तक ढेर में छायादार स्थान पर रखें। इसके पश्चात् फलियों को बोरी में भरकर उन्हें धूप में सुखाने के बाद मड़ाई करते हैं।

बीज को सुखाना

पत्तागोभी के बीज में नमी को सुरक्षित स्तर तक लाने के लिए बीज की नमी 7 से 8 प्रतिशत आने तक अच्छी तरह से साफ कर धूप में सुखाते हैं। इसके बाद बीजों का श्रेणीकरण करते हैं ताकि उच्च गुणवत्ता वाला बीज अलग किया जा सके।

बीज उत्पादन के चरण

प्रजनक बीज → आधारीय बीज

→ प्रमाणित बीज

उपज

असिंचित पर्वतीय क्षेत्रों में 8 से 10 कि.ग्रा. बीज एक नाली क्षेत्र में उत्पादित हो जाते हैं। मध्यम ऊंचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों में पत्तागोभी की फसल रोपाई से लगभग 320 से 330 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। ■

प्रमुख कीटों एवं रोगों की रोकथाम

- **माहूं:** इस कीट के नियंत्रण हेतु फूल आने से पूर्व मार्च माह में 15 मि.ली. रोगोर नामक रसायन को 15 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करते हैं।
- **गोभी की सूंडी:** इस कीट को इमिडाक्लोप्रिड नामक रसायन का 0.04% घोल छिड़ककर नष्ट किया जा सकता है।
- **कटवर्म कीट:** इस कीट को क्लोरोपायरीफॉस नामक रसायन के 0.2% घोल को छिड़ककर नष्ट किया जा सकता है।
- **आर्द्र पतन:** यह रोग नर्सरी अवस्था में लगता है। इससे ग्रसित पौधे गलने लगते हैं। रोग के नियंत्रण हेतु मृदा को कैप्टॉन/फार्मलिन से रासायनिक उपचार करते हैं। इसके लिए क्यारियों में समुचित जल निकास की व्यवस्था होनी चाहिए, बीज घना नही बोना चाहिए तथा प्रतिवर्ष पौधशाला का स्थान बदलते रहें।
- **काला विगलन:** इस रोग के जीवाणु बीज की सतह पर, उसके अन्दर तथा पौधे के मलबे में पाये जाते हैं। इसकी रोकथाम हेतु रोगरहित बीजों को लगाना चाहिए, लम्बा फसलचक्र अपनाना चाहिए तथा बीजों को गर्म पानी से उपचारित करना चाहिए।

बीज उत्पादन तकनीक

पत्तागोभी का बीज उत्पादन पर्वतीय क्षेत्रों में किया जाता है। इसका आनुवंशिक शुद्ध बीज प्राप्त करने के लिए पत्तागोभी व गोभीवर्गीय दो किस्मों के मध्य 1000 मीटर की दूरी रखना अनिवार्य है। बीज उत्पादन करने के लिए दो मौसमों की आवश्यकता होती है। पहले मौसम में बन्द तथा दूसरे मौसम में बीज का उत्पादन होगा। अत: पत्तागोभी का बीज उत्पादन दो तरीकों से किया जाता है।

बन्द से बीज बनाना: इस विधि में नवम्बर-दिसम्बर में पूर्ण विकसित बन्द उखाड़कर पुन: 60 × 60 सें.मी. की दूरी पर प्रतिरोपित करते हैं। पत्तागोभी में बीज उत्पादन के समय फूल तथा बीज के सुगमता से उत्पादन के लिए तीन विधियों को अपनाया जाता है।

स्टंप विधि: इस विधि में बन्द को आधार के ठीक नीचे धारदार चाकू से काटा जाता है। इससे तने को पत्तियों के बाहरी आवरण/घेरे के साथ रखा जाता है।

केंद्रीय कोर अक्षुण्ण विधि के साथ स्टंप: इस विधि में बन्द को ऊपर से नीचे की ओर चारों तरफ से लम्बवत काटा जाता है ताकि केन्द्रीय कोर क्षतिग्रस्त न हो।

सिर अक्षुण्ण विधि: इस विधि में बन्द के ऊपर से दो चीरे इस प्रकार से लगाए जाते हैं ताकि उसके सिर पर क्रॉस का कट बन जाए।

बीज से बीज बनाना: इस विधि में बन्दों को दूसरी क्यारी में स्थानांतरित नहीं किया जाता है। बल्कि प्रारम्भ में ही 60 × 60 सें.मी. की दूरी पर प्रति रोपित किया जाता है।

पौधशाला से अधिक मुनाफा

अभिषेक प्रताप सिंह*, अमृता सिन्हा* और **अर्नबकुण्डु***

सब्जी उत्पादन में हमारा देश चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। वर्तमान में सब्जियों की खेती लगभग 82.13 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में हो रही है और लगभग 135.22 मिलियन टन सब्जियां उत्पादित की जा रही हैं। बिहार एक प्रमुख सब्जी उत्पादक राज्य है। यहाँ पर वर्तमान में लगभग 5.19 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में सब्जियों की खेती हो रही है। इसका सकल उत्पादन 8.22 लाख टन है। बिहार की जलवायु अच्छी होने के कारण यहाँ पर तीनों मौसमों में सब्जियां उत्पादित की जा रही हैं। इनमें टमाटर, बैंगन, मिर्च, आलू, फूलगोभी, कद्दूवर्गीय अदरक एवं हल्दी प्रमुख रूप से उगाई जाने वाली सब्जियां हैं। सब्जी उत्पादन में पौधशाला का एक महत्वपूर्ण स्थान है किन्तु वैज्ञानिक ढंग से प्रबंधन न करने के कारण महंगे बीज पौधशाला में उग जाने के बाद भी गलकर नष्ट जाते हैं। इससे आर्थिक क्षति के अलावा पूरे खेत की रोपाई भी एक साथ तथा समय से नही हो पाती है। सब्जियों में टमाटर, बैंगन, मिर्च, शिमला मिर्च, पत्तागोभी, फूलगोभी, गाँठगोभी, ब्रूसेल्स स्प्राउट, ब्रोकोली, सलाद पत्ता, चिकोरी, सेलेरी एवं प्याज की पौध, पौधशाला में तैयार की जाती है।

कृषि में अधिक मुनाफा और आत्मनिर्भरता के लिए किसान, पौधों की नर्सरी को अपना सकते हैं। पौधशाला में अधिक लाभ के लिए उचित देखरेख की आवश्यकता होती है। बागवानी के क्षेत्र में पौधों की मांग में वृद्धि के कारण किसानों के बीच यह व्यवसाय तेजी से फैल रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में सब्जी पौध की भी अच्छी खासी मांग रहती है। सब्जी उत्पादन में पौधशाला का विशेष महत्व है। टमाटर, मिर्च, शिमला मिर्च, पत्तागोभी आदि अनेक सब्जियों को सीधे खेत में लगाने से उपज के परिणाम अच्छे नहीं रहते हैं। ऐसे में इन सब्जियों को पहले वैज्ञानिक ढंग से पौधशाला में तैयार करना उचित रहता है।

स्थान का चयन

- पौधशाला का स्थान आसपास के क्षेत्र से थोड़ा ऊँचा हो, जहाँ पर पानी नहीं लगता हो।
- पौधशाला खुली जगह पर होनी चाहिए जहाँ पर सूर्य का प्रकाश पूरे दिन उपलब्ध हो।
- सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो।
- पौधशाला की मिट्टी हल्की दोमट या बलुई दोमट तथा पी.एच. मान 7 के आसपास होना चाहिए।

तैयारी

- पौधशाला में पहले एक गहरी जुताई करें तथा बाद में फावड़े से खुदाई कर जमीन को समतल कर लें तथा मिट्टी को भुरभुरी बना लें।
- खरपतवार, पौधों की जड़ें तथा कंकड़ एवं पत्थर को बाहर निकाल दें।
- पौधशाला में 2 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट अथवा पत्ती की

लाभ

- छोटे-छोटे बीजों की बुआई छोटे स्थान पर करने पर देखरेख करना संभव।
- पौध तैयार करना आसान एवं सस्ता तरीका
- समय की बचत
- खेत तैयारी के लिए समय
- उपयुक्त वातावरण प्रदान कर प्रतिकूल मौसम में भी पौध की तैयार की संभव
- खेत में बुआई की अपेक्षा कम बीज की आवश्यकता
- पौधों को बेचकर अतिरिक्त धनार्जन
- जिस खेत में रोपण करना है उसमें पहले से रोपी गयी फसल को 2 से 3 सप्ताह का समय मिल जाता है।

*राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार-848125; कृषि विज्ञान केन्द्र, लादा, समस्तीपुर-II

खाद या 500 ग्राम वर्मीकम्पोस्ट प्रति वर्गमीटर की दर से मिलानी चाहिए।

- पौधशाला की मिट्टी यदि भारी हो तो प्रति वर्गमीटर की दर से 3 कि.ग्रा. बालू मिलानी चाहिए।

क्यारियां बनाना

पौधशाला में क्यारियां दो प्रकार की बनायी जाती हैं ऊँची उठी हुई तथा समतल क्यारी। ऊँची उठी हुई क्यारी मुख्यतया वर्षा ऋतु में पौध तैयार करने हेतु बनाई जाती है। इसकी लम्बाई 3-5 मी., चौड़ाई 1 मी. तथा ऊँचाई 15-20 सें.मी. होनी चाहिए एवं दो क्यारियों के बीच में 30 सें.मी. की दूरी होनी चाहिए। इससे क्यारियों में खरपतवार तथा कीटनाशक एवं रोगनाशक दवाओं का उपयोग सुगमतापूर्वक किया जा सकता है। समतल क्यारी मुख्यतया शरद ऋतु में पौध तैयार करने हेतु बनाई जाती है।

मिट्टी का उपचार

पौधशाला की मिट्टी का उपचार मुख्यतया निम्न विधियों द्वारा किया जाता है:

- मृदा सौरीकरण
- जैविक विधि
- फार्मलीन द्वारा
- फफूँदनाशक दवाओं द्वारा
- कीटनाशक दवाओं द्वारा

मृदा सौरीकरण

पौधशाला की मिट्टी को सूर्य के प्रकाश में उपचार करने को मृदा सौरीकरण कहते हैं। यह विधि मई-जून में अपनानी चाहिए, जब दिन का तापमान 40-45°सें. हो। सौरीकरण करने के लिए सर्वप्रथम पौधशाला की क्यारी की मिट्टी को पानी द्वारा हल्का गीला कर लेना चाहिए। क्यारी को सफेद पॉलीथीन से ढककर चारों तरफ मिट्टी से बंद कर देना चाहिए जिससे हवा चलने पर पॉलीथीन, क्यारी के ऊपर से न उड़ने पायें। क्यारी को ढकी हुई अवस्था में 40-45 दिनों तक रखना चाहिए। 45 दिनों के बाद पॉलीथीन को हटा देना चाहिए।

सारणी: बीज मात्रा और क्षेत्रफल

सब्जियों के नाम	बीज की मात्रा (ग्राम)	क्षेत्र की आवश्यकता (वर्गमीटर)
टमाटर	300 - 350	50 - 60
बैंगन	200 - 250	50 - 60
मिर्च	200 - 300	50 - 60
शिमला मिर्च	300 - 400	60 - 80
फूलगोभी (अगेती)	300 - 400	60 - 80
फूलगोभी	250 - 300	60 - 80
पत्तागोभी	250 - 300	60 - 80
प्याज	5000 - 7000	200 - 250

स्रोत: भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी

लाभ

रोगकारक फफूँदी एवं जीवाणुओं जैसे गलन रोग, फफूंद, जीवाणु धब्बा रोग एवं नर्सरी में खरपतवार तथा सूत्रकृमि का नियंत्रण हो जाता है। इनके अलावा मिट्टी में फॉस्फोरस, पोटाश एवं अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि हो जाती है।

जैविक विधि

इसका उपयोग आर्द्रगलन रोग से बचाव के लिए किया जाता है। इस विधि में मुख्यतया 3 प्रकार के जीवाणुओं का उपयोग किया जाता है। इनमें ट्राइकोडर्मा की विभिन्न प्रजातियां, स्यूडोमोनास फ्लोरोसेन्स प्रमुख हैं। इस विधि में मृदा उपचार हेतु 10 से 25 ग्राम जैव नियंत्रण प्रति वर्ग मीटर क्षेत्रफल एवं बीजोपचार हेतु 6 से 10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपयोग करना चाहिए।

सावधानियां

जैव नियंत्रकों द्वारा उपचार के समय पौधशाला में कम्पोस्ट तथा अन्य कार्बनिक खाद पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होनी चाहिए। जैव नियंत्रक में जीवित तथा सक्रिय जीवाणु पर्याप्त मात्रा में हों। प्रयोग के बाद पौधशाला में धूप एवं वर्षा से बचाव की व्यवस्था होनी चाहिए। जैव नियंत्रकों द्वारा उपचार के उपरांत पौधशाला में अन्य कवकनाशी एवं जीवाणुनाशी का उपयोग नहीं करना चाहिए तथा पौधशाला में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।

फार्मलीन द्वारा: फार्मलीन का उपचार बीज बुआई के 15-20 दिनों पूर्व करना चाहिए। 1.5 से 2.0 प्रतिशत फार्मलीन घोल की 4.5 लीटर मात्रा प्रति वर्गमीटर की दर से 15-20 सें.मी. की गहराई तक डालें जिससे कि मिट्टी गीली हो जाए। क्यारी को पॉलीथीन की चादर से ढक दें। उपचार के 24 घंटे बाद चादर हटा दें तथा 15 दिनों तक खुला छोड़ दें।

फफूंदनाशक दवाओं द्वारा: मृदा उपचार हेतु कैप्टॉन या थीरम की 5-6 ग्राम मात्रा का उपयोग प्रति वर्गमीटर की दर से 15-20 सें.मी. की गहराई तक करना चाहिए।

कीटनाशक दवाओं द्वारा: पौधशाला में बीज बुआई से पूर्व क्यारियों का उपचार फ्यूरॉडान या थीमेट की 3 ग्राम मात्रा का प्रयोग प्रति वर्गमीटर की दर से करना चाहिए।

पौधशाला प्रदर्शन

बीजोपचार

बीजोपचार के लिए थीरम या कैप्टॉन

पौध सुरक्षा

गलन रोग

कारण : फफूँद (पीथियम, फाइटोफ्थोरा, फ्यूजेरियम)।

लक्षण : पौधे जमीन की तरफ से गलकर गिरने लगते हैं।

रोकथाम

- बीज एवं मिट्टी का उपचार के उपरान्त ही पौधशाला में बीज बोयें।
- कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.5 ग्राम या रिडोमिल 1 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी की दर से घोल का छिड़काव करें।

लीफकर्ल

कारण : विषाणु, सफेद मक्खी द्वारा फैलता है।

लक्षण : पत्तियाँ सिकुड़कर टेढ़ी-मेढ़ी, घुमावदार व छोटी हो जाती हैं।

रोकथाम

- पौधशाला में पौध तैयार करने के पूर्व फ्यूराडॉन (3 ग्राम प्रति वर्ग मी.) को अच्छी प्रकार से मिला दें।
- मोनोक्रोटोफॉस या रोगार 1.5 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
- क्यारी को एग्रीनेट जाली से ढक दें।

नामक दवा का 2.5-3.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से प्रयोग करना चाहिए या 0.02 प्रतिशत घोल में करना चाहिए।

बीज की बुआई

बीज की बुआई सामान्यतया पक्तियों तथा छिटकवाँ विधि द्वारा की जाती है। इस विधि से बुआई करने पर खरपतवार का नियंत्रण तथा रोगनाशक एवं कीटनाशक के छिड़काव में आसानी होती है। इस विधि में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 5 सें.मी., गहराई 0.5 सें.मी. तथा बीज से बीज की दूरी 1.0 सें.मी. होनी चाहिए। बीज की बुआई के बाद बीजों को स्थानीय स्तर पर उपलब्ध, पुआल या गन्ने के सूखे पत्तों से अच्छी प्रकार से ढक देना चाहिए। वर्षा से बचाव के लिए पंक्तियों को पॉलीथीन से तथा तेज धूप की अवस्था में हरी जाली द्वारा 2.5-3 फीट की ऊंचाई तक ढकना चाहिए।

क्यारियों से पुआल प्रबंधन

50 प्रतिशत बीजों का अंकुरण हो जाने पर पुआल को हटा देना चाहिए। यह अवस्था विभिन्न सब्जियों में इस प्रकार है;

सब्जी	बीज बुआई के बाद अंकुरण (दिनों में)
टमाटर	6 - 7
बैंगन	5 - 6
मिर्च	7 - 8
गोभीवर्गीय सब्जियां	3 - 4
प्याज	7 - 10

स्रोत: भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी

सिंचाई

प्रारम्भ के 5-6 दिनों तक क्यारियों में फव्वारे द्वारा हल्की सिंचाई देनी चाहिए। वर्षा ऋतु के समय जब बारिश हो रही हो तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। पौध उखाड़ने के 4-5 दिनों पूर्व सिंचाई बंद कर दें तथा पौध उखाड़ने के पूर्व हल्की सिंचाई कर दें जिससे पौध आसानी से उखड़ सके।

खरपतवार नियंत्रण

बीज बोने के 48 घंटे पूर्व क्यारियों से नियमित अंतराल पर खरपतवार को निकालते रहना चाहिए। इसके नियंत्रण हेतु खरपतवारनाशी पेन्डीमेथिलीन 3 मि.ली. दवा को प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

अनावश्यक पौधों को निकालना

क्यारी में 1-2 सें.मी. की दूरी पर पौधे छोड़कर अधिक घने पौधों को हटा देना चाहिए। अधिक घना होने की स्थिति में पौधों का तना पतला तथा कमजोर हो जाता है एवं गलन रोग लगने की आशंका अधिक रहती है। उचित दूरी रहने पर सूर्य का प्रकाश, पोषक तत्व व हवा पूर्ण रूप से मिलती है। इससे पौध की बढ़वार अच्छी तरह होती है तथा पौध भी स्वस्थ तैयार होते हैं।

सारणी: पौधों की आवश्यकता (प्रति हैक्टर)

फसल	पौध की आवश्यकता
टमाटर (सीमित बढ़वार)	33333
टमाटर (असीमित बढ़वार)	22222
बैंगन	33333
मिर्च	45000
शिमला मिर्च	33333
फूलगोभी	25000
पत्तागोभी	45000
गाँठगोभी	66667

स्रोत: भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी

रोपण पूर्व पौधों का उपचार

पौधशाला में पौध रोपण से एक दिन पूर्व रोगार या मेटासिस्टॉक्स (1.5 मि.ली.) एवं मैंकोजेब (2.5 ग्रा) प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। ■

सब्जी फसलों में सूत्रकृमि का उपचार

राहुल सिंह राजपूत*, पूजा कुमारी, प्रदीप कुमार विश्वकर्मा***, बी.सी. अनु******
और **एस. के. गंगवार*******

सूत्रकृमि (निमेटोड) एक तरह का पतला धागानुमा कीट होता है। यह जमीन के अन्दर पाया जाता है। इसे सूक्ष्मदर्शी की सहायता द्वारा आसानी से देखा जा सकता है। इनका शरीर लंबा बेलनाकार तथा बिना खंडों वाला होता है। मादा सूत्रकृमि गोलाकार एंव नर सर्पिलाकार आकृति का होता है। इनका आकार 0.2 मि.मी. से 10 मि.मी. तक हो सकता है। सूत्रकृमि कई तरह के होते हैं और इनमें से प्रमुख जड़गांठ सूत्रकृमि है। इनका प्रकोप फसलों पर ज्यादा देखा गया है। ये परजीवी सूत्रकृमि के रूप में मृदा अथवा फसलों के ऊतकों में रहते हैं। ये कई वर्षो तक मिट्टी के नीचे दबे रह सकते हैं और पौधों को नुकसान पहुचाते हैं। सूत्रकृमि का प्रकोप सभी फसलों पर होता है। इसके कारण जड़ में गांठ का सूखापन, पुट्टी का सूखापन, नीबू का सूखापन, जड़ गलन का सूखापन, जड़ फफोला आदि रोग होते हैं। इसके कारण मुख्य रूप से गेहूं, टमाटर, मिर्च, बैंगन, भिंडी, परवल और धान के अलावा फलों में अनार, नीबू, संतरा, अमरूद, अंजीर, किन्नू, अंगूर समेत अन्य पौधे प्रभावित होते हैं।

सब्जीवर्गीय फसलों जैसे टमाटर, बैंगन, मिर्च, शिमला मिर्च, आलू, भिण्डी, कद्दूवर्गीय फसलों, चुकंदर, गाजर, प्याज, लहसुन, आदि में जड़गांठ सूत्रकृमि की समस्या देखी जाती है। इस समस्या की वजह मिट्टी में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीव सूत्रकृमि (निमेटोड) हैं। ये पौधे की जड़ों में प्रवेश करके, जड़ों को घायल कर उनमें गांठें उत्पन्न कर देते हैं। इनके कारण जड़ों द्वारा पोषक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता घट जाती है। परिणामस्वरूप पौधा मुरझाने लगता है तथा उसकी पत्तियां पीली पड़ने लग जाती हैं। फसल बुरी तरह प्रभावित होकर पूरी तरह खत्म हो जाती है। इससे फसल की उपज में भी व्यापक कमी आती है।

इन सूत्रकृमियों के मुख्य भाग में सुईं के समान एक संरचना होती है जिसे *स्आइलेट* कहते हैं। इसके द्वारा ही ये जड़ों में संक्रमण करके उसके कोशिकाओं व ऊतक से पोषण प्राप्त करते हैं जिससे जड़ों का बढ़ना रुक जाता है। जड़ें फूलकर तथा आपस में विभक्त होकर गुच्छा बना लेती हैं।

वर्तमान में विश्व में लगभग 63 प्रजातियां तथा दो उपप्रजातियां जड़गांठ सूत्रकृमियों की विद्यमान हैं। ये विभिन्न फसलों पर आक्रमण करती हैं। जड़गांठ सूत्रकृमि द्वारा सर्वप्रथम सब्जियों (कद्दूवर्गीय) में हानि का वर्णन सन 1855 में 'बरकिली' नामक वैज्ञानिक ने इंग्लैंड में किया था। पूरे भारतवर्ष में जड़गांठ सूत्रकृमियों की लगभग बारह प्रजातियां (*मिलैडोगाइन इनकागनिटा, एम. एफ्रिकाना, एम. ब्रिविकोडा, एम. थामिसी, एम. जवैनिका, एम. एरिनेरिया, एम. हैप्ला, एम. एक्सीग्युआ, एम. ग्रैमिनीकोला, एम. इण्डिका, एम. लुकनाविका तथा एम. ग्रैमिनिस*) विद्यमान हैं, मुख्यतः पाँच प्रजातियां (*एम. इनकागनिटा, एम. जवैनिका, एम. हैप्ला, एम. एरिनेरिया* तथा *एम. ग्रैमिनिकोला*) बहुतायत में मिलती हैं।

सारणी: पादप परजीवी सूत्रकृमि से प्रभावित होने वाली प्रमुख फसलें

प्रचलित नाम	वैज्ञानिक नाम	प्रभावित फसलें
जड़गांठ रोग सूत्रकृमि	*मेलाइडोगायनी जावानिका, मेलाइडोगायनी इनकोगनिटा, मेलाइडोगायनी आनेरिया प्रजातियां*	कद्दूवर्गीय फसलों में, चुकंदर, गाजर, टमाटर, बैंगन, भिंडी, मिर्च, प्याज आदि सब्जी
आलू का सिस्ट सूत्रकृमि (गोल्डन सिस्ट निमेटोड)	*ग्लोबोडेरा रोस्टोचाइनेनिसस* व *ग्लोबोडेरा पेलीडा।*	आलू
प्याज का तना व बल्ब सूत्रकृमि	*डिटिलेनिचस डिप्सेसी*	प्याज एंव लहसुन

*एसएमएस (पौध संरक्षण); **एसएमएस (उद्यान); ***वरिष्ठ वैज्ञानिक सह प्रधान, केवीके सुखेत; ****एसएमएस (पौध सरंक्षण), केवीके तुर्की, डा राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, बिहार; *****शोध छात्र, जीव विज्ञान विभाग, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उ.प्र.

हमारे देश में वर्ष 1901 में 'बारबर' नामक वैज्ञानिक ने तमिलनाडु प्रांत के देवला नामक स्थान पर सर्वप्रथम चाय की जड़ों में जड़गांठ सूत्रकृमि की उपस्थिति को दर्ज किया था। इसके बाद वर्ष 1906 में इस सूत्रकृमि को काली मिर्च के पौधों की जड़ों पर 'बटलर' नामक वैज्ञानिक द्वारा देखा गया। इसके उपरांत अय्यर नामक वैज्ञानिक ने वर्ष 1926 व 1933 में इस सूत्रकृमि को क्रमशः सब्जियों व अन्य फसलों पर देखा। नीबू के पौधों की जड़ों पर इस सूत्रकृमि का संक्रमण सर्वप्रथम थिरूमाला राव ने देखा था।

कृषि फसलों में मुख्य रूप से सूत्रकृमि द्वारा सब्जीवर्गीय पौधों को बहुत ज्यादा हानि पहुंचायी जाती है। इसकी पहचान किसान नहीं कर पाता है और अन्य कीटनाशकों का छिड़काव कर रोकथाम का प्रयास करता है। फलस्वरूप उसके श्रम, समय एंव धन सभी की हानि होती है एवं समस्या का समाधान भी नहीं होता है। अतः सूत्रकृमि के कारण फसलों में होने वाले लक्षणों की पहचान की जानकारी अत्यंत आवश्यक है ताकि उसका समय से उचित नियंत्रण हो सके।

रोग के लक्षण

पौधों में निमेटोड का प्रकोप होने पर सबसे पहले पौधों की बढ़वार रुक जाती है। इसके बाद धीरे-धीरे पौधे मुरझाने लगते हैं और सूख जाते हैं। सब्जियों के खेत में रोगी पौधे एवं उनके लक्षणों को देखकर आसानी से पहचान की जा सकती है। इसमें मुख्यतः रोगग्रस्त पौधे की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं, पौधा मुरझाकर बौना हो जाता है। पौधे को उखाड़कर देखने पर अगर पौधों की जड़ों में गांठें दिखती हैं एवं जड़ें सीधी न होकर आपस में गुच्छा बना लेती हैं तो यह स्थिति निमेटोड की उपस्थिति को दर्शाती है। पौधों की जड़ों में गाँठें पड़ने के कारण पौधों में फूल एंव फल देर से लगते हैं तथा वे झड़ने लगते हैं। फलों का आकार छोटा हो जाता है व उसकी गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है।

सारणी: सूत्रकृमि प्रतिरोधी फसलों की किस्में

सूत्रकृमि प्रजाति	फसल का नाम	रोग प्रतिरोधी किस्में
जड़गांठ सूत्रकृमि	टमाटर	रोमा, मंगला, हिसार ललित
	बैंगन	पूसा लोंग परपल, ब्लैक ब्यूटी
	तरबूज	शाहजहांपुरी
	तोरई	मेरठ स्पेशल
	खरबूजा	हरा मधु, मध्यम प्रतिरोधी
	खीरा	बीकानेर
	मिर्च	पूसा ज्वाला, मोहनी
सिस्ट सूत्रकृमि	आलू	कुफरी स्वर्णा

परवल फसल में सूत्रकृमि की समस्या

सूत्रकृमि द्वारा हानि

जड़गांठ सूत्रकृमि द्वारा पूरे विश्व में विभिन्न फसलों की लगभग 5 प्रतिशत तक की हानि आँकी गयी है। वहीं भारत में इन सूत्रकृमियों द्वारा फसलों में लगभग 10-12 प्रतिशत की हानि का आकलन किया गया है। वैसे फसलों पर नुकसान का प्रतिशत अलग-अलग है। इनमें से सर्वाधिक क्षति इस सूत्रकृमि द्वारा सब्जियों पर होती है। सब्जियों में इस सूत्रकृमि द्वारा लगभग 50-90 प्रतिशत तक की क्षति दर्ज की गयी है। वहीं धान में 16-32 प्रतिशत, तम्बाकू में 59 प्रतिशत, नीबू में 40-70 प्रतिशत, दलहनी फसलों में 8 प्रतिशत व कपास में 10-15 प्रतिशत तक की हानि का आकलन किया गया है।

हमारे देश में कृषक सब्जियों से अधिक लाभ कमाने के लिए सघन खेती करते हैं। इससे सूत्रकृमियों को आसानी से पोषण प्राप्त हो जाता है। इससे इनकी संख्या मृदा में कई गुना बढ़ जाती है। फसल में हानि का प्रतिशत सूत्रकृमियों की मृदा में संख्या व बोई जाने वाली किस्म आदि पर निर्भर करती है। सामान्य अवस्था में इनके द्वारा 20-40 प्रतिशत की क्षति पहुंचायी जाती है व रोग की अधिकता होने पर क्षति प्रतिशत 70-80 भी हो सकती है।

उपाय

सूत्रकृमियों से रोकथाम के लिए निम्न विधियों को अपनाया जा सकता है:

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई: मई-जून के महीनों में खेत की मिट्टी को पलटकर हल से 15-30 सें.मी. की गहरी जुताई करके छोड़ देना चाहिए ताकि सूत्रकृमि के अण्डे व डिम्भक ऊपरी सतह पर आ जाएं। ये सूर्य के ताप के कारण या चिड़ियों द्वारा नष्ट कर दिए जाते हैं।

रोगरहित पौध का चयन: स्वस्थ, साफ व रोगरहित पौध का चयन करना चाहिए।

रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन: सूत्रकृमियों के प्रबंधन का यह सबसे सरल, सस्ता व प्रभावी उपाय है। कुछ फसलों के सूत्रकृमियों की प्रतिरोधक किस्मों का उदाहरण दिया जा रहा है। इनका चयन करके किसान सूत्रकृमियों का प्रबंधन कर सकते हैं।

गर्म जल से उपचार: 46 डिग्री सेल्सियस तापक्रम जल द्वारा आलू व प्याज के कंद/बीजों को 1 घण्टे तक उपचारित करने से सूत्रकृमि नष्ट हो जाते हैं।

स्वच्छ कृषि औजारों का प्रयोग: एक खेत से दूसरे खेतों में कृषि औजारों के प्रयोग से पहले इन्हें अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिए ताकि यदि एक खेत में सूत्रकृमि उपस्थित हों तो वे दूसरे खेत में न पहुंच पाएं।

फसलचक्र: सूत्रकृमियों की कई प्रजातियां जैसे- *ग्लोबोडेरा, मेलाइडोगायनी, हेटरोडेरा* आदि मृदा में लंबे समय तक सक्रिय नहीं रहती हैं, अतः इनकी रोकथाम की जा सकती है। जिन खेतों में जड़गांठ का प्रकोप होता है वहां ऐसी सब्जियों का या अन्य फसलों का चयन करें जिनमें यह रोग नहीं लगता है।

रोगग्रस्त पौधे का उन्मूलन: यदि आरंभ में सूत्रकृमि का प्रकोप बहुत कम होता है तो रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर फेंक देना चाहिए।

रक्षक फसलों का प्रयोग: कुछ फसलें जैसे शतावर, क्रोटोलेरिया आदि जड़गांठ सूत्रकृमि की संख्या को कम करती हैं। सफेद

सरसों, आलू के सिस्ट सूत्रकृमि को रोकती है। ये शत्रु फसलें कहलाती हैं। इसके अलावा कुछ फसले हैं जिनकी जड़ों से ऐसे रासायनिक पदार्थ निकलते हैं जो सूत्रकृमियों के लिए विष का काम करते हैं जैसे संेवती और गेंदा।

कार्बनिक खाद का उपयोग: कार्बनिक खाद का प्रयोग सूत्रकृमियों से प्रतिरोध उत्पन्न करने वाले कुछ ऐसे कवक व बैक्टीरिया की वृद्धि में सहायक होता है, जिससे इनका संक्रमण कम हो जाता है। खाद को भूमि की जुताई करते समय या बीज बोने अथवा पौध लगाने के 20 से 25 दिनों पहले डालना चाहिए। इनमें मुख्यत: नीम, महुआ, अरण्डी, सरसों व मूंगफली आदि की खली को 25 से 30 क्विं. प्रति हैक्टर की दर से डालना चाहिए।

पौध संगरोध: एक देश से दूसरे देश में सूत्रकृमियों के प्रसार को रोकने के लिए पादप संगरोध के बहुत महत्वपूर्ण नियम बनाये गये हैं। उदाहरणस्वरूप आलू के सिस्ट के घरेलू पादप संगरोध का नियम बना है। इसके तहत दार्जिलिंग से आलू का निर्यात देश के अन्य हिस्सों में प्रतिबंधित है।

रासायनिक नियंत्रण

- कार्बोफ्यूरॉन/ फोरेट को 2 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व की दर से प्रति हैक्टर भूमि में मिलायें अथवा 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज दर सें उपचारित करें।
- पौध को कार्बोसल्फॉन 25 ई.सी. 500 पी.पी.एम से एक घंटे तक उपचारित करें। पौध नर्सरी को कार्बोसल्फॉन 1 ग्रा./ली. पानी का घोल बनाकर 30 मिनट के लिए उपचारित करें इसके पश्चात लगाएं।

जैविक समाधान व पौध संरक्षण

निमेटोड को मिट्टी में रसायन छिड़ककर मारने का प्रयास महंगा ही नहीं अपितु कई बार निष्प्रभावी भी होता है। निमेटोड और दीमक आदि कीटों को प्रभावी रूप से नष्ट करने हेतु नीम खाद पाउडर का इस्तेमाल सबसे कारगर है। इसके लिए नीम की खली का तेलयुक्त होना आवश्यक है। नीम की खाद व खली के इस्तेमाल से निमेटोड के जीवनचक्र में बाधा आती है एवं उनका बनना रुक जाता है। नीम खाद के इस्तेमाल से उपज में 40 प्रतिशत तक की वृद्धि भी होती है। फूलों का ज्यादा बनना तथा फलों की संख्या भी बढ़ती है। फल अधिक स्वादिष्ट और चमकदार बनते हैं तथा उनका आकार भी बड़ा होता है।

नीम खाद का इस्तेमाल

फसलों में निमेटोड के उपचार के लिए गर्मियों के मौसम में ही खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए। इसके बाद खेत को एक हफ्ते के लिए छोड़ देना चाहिए। बुआई से पहले नीम की खली 10 क्विंटल प्रति एकड़ के हिसाब से डालकर फिर से जुताई करने के बाद ही खेत में फसलों की बुआई करनी चाहिए। फलों में निमेटोड के प्रभाव को कम करने के लिए अनार, नीबू, संतरा, अमरूद, अंजीर, किन्नू, अंगूर एवं समस्त प्रकार के फलों के पौधों की रोपाई के समय एक मीटर गहरा गड्ढा खोदकर नीम खली एव गोबर की खाद को मिट्टी में अच्छी तरह मिला लें। इसके अलावा जो पौधे बड़े हो रहे हैं उन पौधों की उम्र के हिसाब से नीम खाद की मात्रा संतुलित करें। इसे 1 से 2 साल तक के पौधे में 1 किलो और 3 से 5 वर्ष तक के पौधे में 2 से 3 किलो प्रति पौधे के हिसाब से डालकर पौधे की जड़ों के पास थाला बनाकर मिट्टी में अच्छी तरह मिलाकर पानी डाल दें। इसके अलावा ड्रिप के जरिए घुलनशील नीम का तेल भी डाल सकते हैं।

प्रंबधन

रोग प्रबधंन की विभिन्न विधियों में से केवल किसी एक विधि द्वारा सूत्रकृमियों का पूरी तरह से नियंत्रण संभव नहीं है। अत: दो या दो से अधिक विधियों का समावेश करके सूत्रकृमियों की रोकथाम ही समन्वित रोग प्रबंधन कहलाती है।

- ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करके।
- क्यारी को नर्सरी लगाने के पूर्व कार्बोफ्यूरॉन, फोरेट आदि से उपचारित करना चाहिए।
- फसल लगाने के 20-25 दिनों पूर्व कार्बनिक खाद को मिलाना चाहिए।
- फसलचक्र को अपनाना चाहिए।
- रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करना चाहिए।
- अंत में यदि इन सब से रोकथाम नहीं हो तब रसायनों का प्रयोग करें।

सूत्रकृमियों के प्रभावी नियंत्रण के लिए आवश्यक है कि किसानों को सूत्रकृमि की पहचान, रोग के लक्षण आदि के बारे में पूर्ण जानकारी हो। इससे रोकथाम करने के लिए विभिन्न उपाय अपनाने में आसानी हो पाएगी। वर्तमान में अत्यधिक रासायनिक तत्वों के उपयोग के कारण भूमि, जल, पर्यावरण सेहत व खाद्य पदार्थ की गुणवत्ता खराब होने के साथ ही साथ उनके मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों को देखते हुए सूत्रकृमियों के नियंत्रण हेतु समन्वित प्रबंधन ही सबसे उपयुक्त माना गया है। ■

भिंडी का विषाणुजनित रोगों से बचाव

बृजेश कुमार मौर्या*, **हिमांशु सिंह****, **डी.पी. सिंह***, **प्रदीप करमाकर***** और **नीतू****

भारत में ही नहीं अपितु पूरे विश्व में सब्जी की फसल में भिंडी का प्रमुख स्थान है। इसे अमेरिका में लेडीज फिंगर तथा अंग्रेजी भाषा में ओकरा के नाम से जाना जाता है। पौष्टिक गुणों से भरपूर होने के कारण भिंडी, विश्व की एक लोकप्रिय सब्जी फसल है। इसमें मुख्य रूप से कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन के साथ कई खनिज लवण जैसे फॉस्फोरस, कैल्शियम, विटामिन-ए, रिबोफ्लेविन एवं थाइमीन पाए जाते हैं। भिंडी की फलियां आयोडीन तथा आयरन की भी अच्छी स्रोत हैं।

भारत में भिंडी की खेती 0.519 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल में की जाती है। भिंडी की फसल में वायरसजनित पीली पत्ती शिरा मोजैक तथा भिंडी पर्ण कुन्चन (इनेशन लीफ कर्ल) नामक रोगों का अत्यधिक प्रकोप होने के कारण उत्पादन तथा उत्पादकता दोनों प्रभावित हुई हैं। यदि इन रोगों का प्रकोप खेत में अधिक बढ़ जाता है तो पूरा पौधा नष्ट हो जाता है तथा उत्पादन भी शून्य हो जाता है। समय रहते इन रोगों का प्रबंधन न हो पाने तथा जानकारी के अभाव में भिंडी उगाने वाले किसानों को हर वर्ष अत्यधिक नुकसान होता है।

पीली पत्ती शिरा मोजैक के लक्षण

यह भिंडी की फसल का एक गंम्भीर रोग है। इसमें पौधों की पत्तियों की शिराएं पीली होकर मोटी तथा उभरी हुई दिखाई देती हैं जबकि दो शिराओं के बीच का भाग हरा रहता है। बाद की अवस्था में क्लोरोफिल नष्ट होने के कारण पूरी पत्ती पीली पड़ जाती है। पत्तियों में ऊपर की तरफ घुमाव, सिकुड़न तथा अवरोध देखने को मिलता है। रोग का संक्रमण बढ़ने से रोगग्रस्त पौधे की पत्तियां पीली एवं चितकबरी होकर मुड़ने लगती हैं। इस रोग से संक्रमित पौधे के फल भी हल्के पीले रंग के टेढ़े तथा आकार मे छोटे हो जाते हैं, जो विपणन योग्य नहीं रह जाते हैं। इस रोग का संक्रमण पौधों की किसी भी अवस्था में हो सकता है। प्रारंभिक अवस्था में संक्रमण होने पर पौधे अविकसित रह जाते हैं तथा संक्रमित पौधों में फलत नहीं होती है। इस रोग का प्रकोप बरसात वाली फसल में अधिक देखने को मिलता है।

भिंडी पर्ण कुन्चन के लक्षण

इस रोग को पहली बार वर्ष 1980 में भारत के कर्नाटक राज्य में देखा गया। शुरुआत की अवस्था में पत्तियों की निचली सतह पर कुछ हिस्से खुरदरे तथा उभरे हुए दिखायी देते हैं। ये पत्तियां ऊपर की तरफ मुड़ने लगती हैं। तना, शाखाएं तथा पत्ती के

पीली शिरा मोजैक वायरस द्वारा क्षतिग्रस्त पौधा

*चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर; **बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा, उत्तर प्रदेश; ***भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

डंठलों में भी घुमाव देखने को मिलता है। संक्रमित पत्तियां मोटी एवं चमड़े के समान हो जाती हैं। गंभीर रूप से संक्रमित पौधों में फल कम लगते हैं तथा बीजधारण नहीं के बराबर होता है।

विषाणुजनित रोगों से होने वाले नुकसान

यदि पौधे अंकुरण के 20 दिनों के भीतर संक्रमित हो जाते हैं, तो उनकी वृद्धि कुछ पत्तियों और विकृत फलों से धीमी हो जाती है। इससे 94-100 प्रतिशत तक की हानि होती है। पौधों के संक्रमण में देरी के साथ क्षति की मात्रा कम हो जाती है। अंकुरण के 50-65 दिनों के बाद संक्रमण होने पर 49-84 प्रतिशत की हानि होती है।

रोगों के प्रमुख कारण

इन रोगों में नुकसान के प्रमुख कारक बेगमोवायरस है। यह सफेद मक्खी द्वारा संचारित होता है। रोगाणुवाहक अपनी संख्या नहीं बढ़ाते हैं, लेकिन विभिन्न माध्यमों से सफेद मक्खी द्वारा पौधों के बीच आसानी से फैल जाते हैं। यह वायरस, रोग वृद्धि के सभी चरणों के दौरान पौधे को संक्रमित करता है, हालांकि, अति संवेदनशील चरण 35-50 दिनों तक होता है। सफेद मक्खी की संख्या एवं वायरस की उग्रता मोटे तौर पर तापमान, आर्द्रता एवं 20-30 डिग्री सेल्सियस के न्यूनतम तापमान से प्रभावित होती है।

बचाव

इन रोगों से बचाव के लिए सर्वप्रथम वायरस द्वारा ग्रसित पौधे को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए तथा ग्रसित पौधे को एकत्रित करके जला देना चाहिए या फिर गड्ढा बनाकर उसमें ढक देना चाहिए। सफेद मक्खी, वायरस को फैलाने का काम करती

संक्रमित पौधा

पर्ण कुंचन द्वारा क्षतिग्रस्त पौधा

है। इसे नियंत्रित करने के लिए फेरोमोन ट्रैप का उपयोग कर सकते हैं ताकि यह कीट इसमें आकर्षित होकर नष्ट हो जाए। बेहतर होगा कि हमेशा प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें। वर्तमान में भिंडी की पीली शिरा मोजैक विषाणु से प्रतिरोधी किस्में निम्न हैं-

काशी चमन: भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा विकसित इस प्रजाति के पौधे की लम्बाई 120-125 सेंटीमीटर तक होती है तथा खरीफ एवं रबी दोनों मौसमों में आसानी से उगायी जा सकती है। इस प्रजाति की उपज क्षमता 150 से 160 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

पूसा भिंडी-5: यह प्रजाति भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित की गयी है। इसकी खरीफ (वर्षा ऋतु) में पैदावार लगभग 18 टन प्रति हैक्टर होती है। इसके फल आकर्षक गहरे हरे रंग एंव मध्यम लंबाई के होते हैं। यह प्रजाति जायद एवं खरीफ दोनों मौसमों में सफलतापूर्वक खेती के लिए उपयुक्त है।

अर्का निकिता: यह किस्म भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, कर्नाटक द्वारा नर बंध्यता पंक्ति के माध्यम से विकसित की गई है। इस प्रजाति के फल गहरे हरे, मध्यम, चिकने और कोमल होते हैं तथा पैदावार लगभग 21 से 24 टन प्रति हैक्टर प्राप्त होती है।

जैविक नियंत्रण

रोगाणुवाहक को 5 प्रतिशत नीम के बीज की गुठली के अर्क या अदरक, लहसुन एवं मिर्च के अर्क का छिड़काव कर रोकें।

पत्ती पर सफेद मक्खी का प्रकोप

नागफनी या दूध की झाड़ी (मिल्क बुश) के टुकड़े बना लें, पानी में डुबो दें (टुकड़ों के तैरने के लिए पर्याप्त मात्रा में पानी लें), इसे 15 दिनों तक किण्वन के लिए छोड़ दें। इसके बाद इसे प्रभावित पौधों पर छिड़कें। सबसे पहले नीम एवं सरसों का तेल, राइजोबैक्टीरिया, क्रोजोफेरा तेल और उसके बाद पालमारोसा तेल लगाएं। इसके 0.5 प्रतिशत तेल और 0.5 प्रतिशत धुलाई वाले साबुन के मिश्रण को भी मददगार बताया गया है।

रासायनिक नियंत्रण

वायरस को रासायनिक तरीके से पूर्णतः नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। इसके लिए, उपलब्धता होने पर हमेशा जैविक उपचारों पर विचार करना चाहिए। सफेद मक्खियों में कीटनाशक का प्रारम्भिक इस्तेमाल प्रभावी होता है। सफेद मक्खी सभी कीटनाशकों के लिए प्रतिरोध क्षमता विकसित कर लेती है, इसलिए एसेटेमीप्रिड 20 एस.पी. रसायन का 40 ग्राम प्रति हैक्टर के दो छिड़काव मोजैक वायरस को कम करने में प्रभावी होते हैं। इसके लिए निम्न बातों पर ध्यान देना अति आवश्यक है-

- खेत को हमेशा खरपतवारमुक्त रखना चाहिए।
- फूल आने से पहले एवं फूल आने के बाद मैलाथियान 50 ई सी, 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करने से रोग के प्रकोप को आने से रोका जा सकता है।
- डायमेथोएट 2 मिलीलीटर/लीटर या नीम ऑयल 5 मिलीलीटर/लीटर अथवा एसिटामिप्रीड 2 ग्राम/लीटर दवा की मात्रा को पानी में मिलाकर छिड़काव करें तथा आवश्यकता पड़ने पर 10 दिनों के अंतराल पर 4 से 5 बार छिड़काव करना चाहिए।
- साइपरमेथ्रिन या डेल्टामेथ्रिन का छिड़काव इस रोग के नियंत्रण के लिए न करें क्योंकि यह रोग को बढ़ाता है। ■

सूरन है एक प्राकृतिक उपहार

प्रदीप कुमार*, **उपासना चौधरी****, **शैलेन्द्र कुमार***** और **राहुल कुमार******

प्राचीन काल से ही इस जगत में विभिन्न प्रकार की कंदीय सब्जियां बिना उगाये ही हमें प्रकृति से उपहार स्वरूप प्राप्त हुई हैं। वर्तमान समय में औषधीय एवं पोषण गुणों से भरपूर होने पर कंदीय सब्जियां हमारे दैनिक जीवन में अति महत्वपूर्ण हो गयी हैं। ऐसी सब्जियों का वर्णन भारतीय धर्मग्रंथों में भी पाया जाता है। अत: वर्तमान समय में कंदीय सब्जियों की उपयोगिता को देखकर इनकी व्यावसायिक खेती मानव जीवन में विभिन्न प्रकार से लाभप्रद साबित होगी।

सूरन (*अमोर्फोफैलस पेओनीफोलियस*) ऐरेसी कुल के अंतर्गत आने वाली एक बहुवर्षीय भूमिगत कंदीय सब्जी है। इसमें विभिन्न प्रकार के औषधीय गुण पाएं जाते हैं। इसे जिमीकंद, ओल इत्यादि नामों से भी जाना जाता है। कंद बड़ा और हाथी के पैर के आकार का होने के कारण इसे एलीफैंट फुटयाम भी कहा जाता है। उत्पादन की दृष्टि से पश्चिम बंगाल 41.88% के साथ देश में प्रथम स्थान पर है। प्रोटीन और स्टार्च की प्रचुर मात्रा होने के कारण सूरन का प्रयोग सब्जी, चिप्स, अचार एवं औषधि बनाने में किया जाता है। पौराणिक महत्व होने के कारण इसे पूजा सामग्री के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। यह बिहार की मुख्य सब्जी के रूप में खूब प्रयोग में लायी जाती है। यह फसल अपनी छाया सहनशीलता, खेती में आसानी, उच्च उत्पादकता, कीटों और रोगों का कम प्रकोप, स्थिर मांग और उचित कीमत के कारण लोकप्रियता हासिल कर रही है। जंगली पौधों के कंद अत्यधिक तीक्ष्ण होते हैं, जिससे कंदों में मौजूद कैल्शियम ऑक्सलेट के अत्यधिक उत्पादन के कारण गले और मुंह में जलन होती है। जिमीकंद में अन्य सब्जियों की अपेक्षा प्रति इकाई उच्च शुष्क पदार्थ पैदा करने की क्षमता होती है। अत: भारतीय किसानों के लिए यह बहुत लाभकारी फसल है।

*पीएचडी शोध छात्र-बागवानी (सब्जी विज्ञान) विभाग, पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर; **डॉ. राजेंद्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार; ***बाँदा कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, बाँदा, उत्तर प्रदेश; ****चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौधोगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर उत्तरप्रदेश

पोषक तत्व

इसके कंदों में 18.0% स्टार्च, 1-5% प्रोटीन एवं 2.0% तक वसा होता है। इनके अलावा पत्तियों में 2-3% प्रोटीन, 3.0% कार्बोहाइड्रेट एवं 4-7% कच्चे फाइबर के

औषधीय विशेषताएं

इसकी पत्तियों और कोमल तने का प्रयोग सब्जी के रूप में किया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि यह कब्ज की स्थिति में मल त्याग को सामान्य बनाये रखने में काफी उपयोगी है। यह एक अच्छा एंटी-इन्फ्लामेंटरी एजेंट के साथ-साथ अच्छा डिटॉक्सीफायर भी है। यह शरीर में बढ़ी हुई प्रोस्टेट ग्रंथियों को सुधारने का कार्य करने के अलावा वातनाशक एवं कृमिनाशक के रूप में उपयोगी है। जिमीकंद में पाया जाने वाला कॉपर, लाल रक्त कोशिकाओं को बढ़ाकर शरीर में रक्त संचार को दुरुस्त करता है और आयरन रक्त संचार को ठीक करने में मदद करता है। सूरन दिमाग तेज करने में भी सहायक है। इसे खाने से स्मरण शक्ति बढ़ती है, साथ ही यह अल्जाइमर रोग से भी बचाता है।

कॉलर रॉट से ग्रसित पौधा

साथ-साथ कैल्शियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम, सेलेनियम, फॉस्फोरस एवं जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व पाए जाते हैं।

रोपण सामग्री का आकार

रोपण हेतु उपयोग किये जाने वाले कंदों का प्रारम्भिक आकार उपजित कंदों के आकार के निर्धारण में अहम भूमिका निभाते हैं। इसके लगभग 400-500 ग्राम आकार के साबुत कंद व्यावसायिक फसल उत्पादन के लिए उपयुक्त होते हैं। इनसे 6-7 महीने की अवधि के पश्चात 3-4 कि.ग्रा. के कंद प्राप्त किये जाते हैं। अंकुरण प्रतिशत एवं समग्र उपज प्राप्त करने के लिए कटे हुए कंदों की तुलना में साबुत कंदों का उपयोग काफी लाभप्रद होता है।

सारणी: सूरन की उत्पादन तकनीक

रोपाई का समय	**फरवरी-अप्रैल**
प्रवर्धन विधि	कंद के टुकड़े-100 ग्राम, पूरा कंद-750 ग्राम
रोपण विधि	नाली एवं कूंड विधि
गड्ढे का आकार (सें.मी.)	60×60×45 सें.मी.
पौध अन्तराल	90×90 सें.मी.
गोबर की खाद (टन/है.)	25
उर्वरक (कि.ग्रा./है.)	100:50:150
फसल अवधि (महीने)	8-10
औसत उपज (टन/है.)	35-40

प्रमुख समस्याएँ

पत्ती झुलसा

यह फाइटोप्थोरा नामक कवकजनित रोग है। यह रोग आमतौर पर पुरानी पत्तियों में अगस्त-सितम्बर के महीने में दिखाई देता है। इससे पत्तियों में छोटे-छोटे गोलाकार, पीले रंग के धब्बे बन जाते हैं जो बाद में भूरे होकर सूखे दिखने लगते हैं और पत्तियां टूटकर जमीन पर गिर जाती हैं।

कॉलर रॉट

जिमीकंद उत्पादन में यह बहुत ही विनाशकारी समस्याओं में से एक है। यह रोग मुख्यत: 2-3 महीने के पौधों पर पाया जाता है। इसमें पौधे का मिट्टी से जुड़ा हुआ भाग सड़कर में गिर जाता है। मृदाजनित कवक राइजोक्टोनिया तथा जलभराव, खराब जल निकास एवं कंद में यांत्रिक चोट आदि रोग फैलने के मुख्य कारण हैं।

निवारण

- प्रवर्धन हेतु प्रयोग किये जाने वाले कंद को स्वस्थ, रोगरहित व उच्च गुणवत्ता वाला होना चाहिए।
- रोपण हेतु प्रभावित कंदों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- रोगग्रसित पौधों को खेत से निकाल कर अलग कर देना चाहिए।
- उचित जल निकास की सुविधा और नीम की खली का प्रयोग करना चाहिए।

पर्ण झुलसा से ग्रसित पौधा

सूत्रकृमि

जड़ग्रंथि सूत्रकृमि भी जिमीकंद में उपज घटने का मुख्य कारण है। इसे समन्वित प्रबंधन से कम किया जा सकता हैं जो है-

- मृदा सौरीकरण द्वारा।
- फसल चक्र अपनाकर।
- जैव सुधार जैसे नीम खली आदि के प्रयोग से।
- रोपण सामग्री को गर्म पानी में डुबोकर।

संभावनाएं

जिमीकंद को सूरन या बिहार राज्य में ओल भी कहा जाता है। इसका धार्मिक महत्व होने के कारण इसे पूजा के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। पोषण एवं औषधीय गुणों से भरपूर तथा प्रति हैक्टर अधिक उपज देने के कारण इससे उचित मूल्य प्राप्त होता है। यदि किसान इसकी व्यावसायिक खेती करेंगे तो अवश्य ही उनके जीवन में खुशहाली आयेगी।

वैज्ञानिक विधि

जैविक सब्जी की बागवानी

विभू पाण्डेय*, **देवेन्द्र पाल***, **अनुज पाल*** और **कौशलेंद्र प्रताप सिंह****

जैविक सब्जी की बागवानी रसायनों के बिना की जाने वाली जैविक कृषि की एक प्रणाली है। इस प्रणाली के तहत कृत्रिम उर्वरक, कीटनाशक, वृद्धि हार्मोन और नियामक निषिद्ध हैं। इसका लक्ष्य आय और रोजगार में वृद्धि करते हुए उच्च गुणवत्ता वाले, पौष्टिक आहार का उत्पादन करना है। यह उत्पादन प्रणाली मिट्टी, पारिस्थितिकी तंत्र और लोगों के स्वास्थ्य को बनाए रखती है। यह प्रतिकूल प्रभावों वाले आदानों के उपयोग की बजाय पारिस्थितिक प्रक्रियाओं, जैव विविधता और स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल चक्रों पर निर्भर करती है। इसके अलावा साझा पर्यावरण को लाभ पहुंचाने के लिए जैविक कृषि परंपरा, नवाचार और विज्ञान को जोड़ती है।

जैविक खेती, कृत्रिम या सिंथेटिक उर्वरकों के उपयोग के बिना फसलोत्पादन करने की प्रणाली है। यह नवीकरणीय संसाधनों के उपयोग, ऊर्जा, मिट्टी, पानी, पर्यावरण रखरखाव और वृद्धि के संरक्षण पर जोर देने वाली प्रथा है।

जैविक बागवानी

यह प्रणाली मिट्टी की जैविक उर्वरता को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित करती है ताकि फसलें उन पोषक तत्वों को अवशोषित कर सकें, जिनकी उन्हें आवश्यकता होती है। इस प्रणाली के भीतर एक पारिस्थितिक संतुलन का विकास कीटों, रोगों और खरपतवारों को नियंत्रित करने में मदद करता है। इसके माध्यम से एक खेत के भीतर सभी कचरे और खादों का पुनर्चक्रण किया जा सकता है।

जैविक बागवानी में संक्रमण

जैविक सब्जी उत्पादन एक लंबी अवधि की प्रक्रिया है। यह एक ही बढ़ते मौसम के लिए इस्तेमाल की जाने वाली एकल उत्पादन पद्धति के बजाय चरणों में की जाती है। जैविक उत्पादन तकनीकों का उपयोग करते समय पारंपरिक से जैविक बागवानी तकनीकों में संक्रमण की आवश्यकता होती है। मिट्टी की उर्वरता या गुणवत्ता को सुधारना और बनाए रखना इस संक्रमण का पहला कदम है। परिणामस्वरूप, हम कह सकते हैं कि सफल जैविक सब्जी उत्पादन की नींव स्वस्थ और उपजाऊ मिट्टी है।

जैविक रोग प्रबंधन

स्थल चयन: सब्जियों को उगाने के लिए अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी का चयन करें।

प्रतिरोध या सहनशीलता: उगाने के लिए रोग प्रतिरोधी सब्जियों की किस्मों का ही चयन करें।

रोगमुक्त प्रतिरोपण: बहुत सी सब्जियों को प्रतिरोपण के रूप में स्थापित किया जा सकता है। इस प्रकार, रोपाई के लिए स्वस्थ पौध का चयन करें।

फसल चक्रण: एक ही वानस्पतिक परिवार में पौधों की लगातार फसल लेने से रोग कारक जीवों का निर्माण होता है। इस प्रकार स्वस्थ फसलचक्र ही अपनाना चाहिए।

पौधों के बीच की दूरी और प्रशिक्षण: घना रोपण अक्सर रोगों के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ा सकता है। उचित अंतराल और प्रशिक्षण का पालन किया जाना चाहिए।

मल्चिंग: कार्बनिक मल्च जैसे पुआल, घास, खाद, अखबार या लकड़ी की छीलन से मिट्टी और पौधे के बीच सीधे संपर्क को कम करके रोग की रोकथाम में सहायता मिल सकेगी।

संक्रमित पौधे: किसी भी गंभीर रोग के लक्षण दिखने वाले पौधे को जड़ से उखाड़कर

जैविक सब्जी की बागवानी का महत्व

- जैविक कृषि का घटक होने के नाते, जैविक सब्जी की बागवानी खेत पर प्राकृतिक विविधता और जैविक चक्र को बढ़ाती है।
- यह कृत्रिम उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भर होने के बजाय बगीचे को आत्मनिर्भर और टिकाऊ बनाने पर आधारित है।
- विभिन्न बहु और अंतर-फसल प्रणाली के लिए उपयोगी।
- जैविक सब्जियों से उच्च मूल्य की प्राप्ति।
- कम समय में अधिक पैदावार और बेहतर आर्थिक लाभ देने में सक्षम।
- फार्म और ऑफ फार्म रोजगार का सृजन।

*फल विज्ञान विभाग; **सब्जी विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश)

लाभ

उपभोक्ताओं को

- उच्च पोषण
- रसायन मुक्त
- अच्छी गुणवत्ता से परिपूर्ण

उत्पादकों को

- स्वस्थ मिट्टी
- खरपतवार प्रबंधन
- सूखा प्रतिरोध
- संवर्धित मूल्य

बाधाएं

- जैविक विकल्पों का अभाव
- जलवायु प्रभाव
- जैविक रूप से उगाई जाने वाली सब्जियों की कीमत काफी अधिक होती है।
- पारंपरिक तुलना में जैविक उत्पादन के साथ विपणन योग्य पैदावार अक्सर कम होती है।
- पोषक तत्वों और कार्बनिक पदार्थों के स्रोत सीमित हैं।
- अधिक समय की आवश्यकता है।
- जैविक खेती के लिए काफी कौशल की आवश्यकता होती है।
- प्रणाली में सावधानीपूर्वक अवलोकन, अधिक समझ और खेती की जानकारी आवश्यक

नष्ट कर दें ताकि अन्य संक्रमित पौधों को फैलने से रोका जा सके।

स्वच्छता: रोगों को एक मौसम से दूसरे मौसम तक रोकने के लिए, सभी रोपण ट्रे और फसल कंटेनर को नियमित अंतराल पर साफ करें।

जैविक कीटनाशक: सब्जियों के लिए जैविक फफूंदनाशकों में कॉपर (बोर्डो मिश्रण या सल्फेट्स), हाइड्रोजन पैराक्साइड और सोडियम बाइकार्बोनेट (बेकिंग सोडा) शामिल हैं। जैविक उत्पादकों को कोई भी नया रसायन लगाने से पहले ओएमआरआई सूची की जांच करनी चाहिए या प्रमाणक से परामर्श करना चाहिए।

जैविक खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार के बीज को कम करें: कच्ची खाद, अपरिपक्व खाद, घास या पुआल में खरपतवार के बीज हो सकते हैं।

सब्जियों के प्रकार: कुछ सब्जियां खरपतवारों के साथ अपेक्षाकृत अधिक प्रतिस्पर्धी होती हैं। उदाहरण के लिए शकरकंद, विंटर स्क्वैश, स्वीट कॉर्न और टमाटर प्रभावी रूप से खरपतवारों का मुकाबला कर सकते हैं।

ज्वाला निराई: ज्वाला निराई, या खरपतवारों को मारने के लिए गर्म लौ का उपयोग नष्ट करने, पुरानी बीज क्यारी को हटाने अथवा सब्जी की फसल से पहले निकलने वाले खरपतवारों के लिए प्रभावी हैं। धीमी गति से अंकुरित होने वाली सब्जियों जैसे प्याज, पार्सनिप और गाजर में खरपतवार नियंत्रण के लिए यह विधि प्रभावी है।

ड्रिप सिंचाई: ड्रिप सिंचाई, पानी प्राप्त करने वाले मिट्टी के क्षेत्र को कम करके खरपतवार के उद्भव को कम करती है।

सौरीकरण: इसके माध्यम से जिस क्षेत्र में फसलें लगाई जाएंगी, वहां फैले साफ प्लास्टिक से खरपतवार व इसके बीज और यहां तक कि कुछ पौधों के रोगजनकों को भी नष्ट किया जा सकता है।

जैविक शाकनाशी: खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए एसिटिक एसिड (सिरका), सिट्रिक एसिड और कॉर्न ग्लूटेन मील सहित विभिन्न जैविक जड़ी-बूटियों का उपयोग कर सकते हैं।

जैविक कीट प्रबंधन

लाभकारी कीटों के लिए आवास और ट्रैप क्रॉपिंग: हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं के लिए अनुकूल वातावरण बनाना। कीटों, मकड़ियों और घुन के 100 से अधिक परिवारों में ऐसी प्रजातियां हैं जो हानिकारक कीटों की प्राकृतिक दुश्मन हैं।

ट्रैप का उपयोग कीटों को फंसाकर और मारकर उनकी आबादी को कम करने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए, पीले चिपचिपे जाल सफेद मक्खियों, एफिड्स और अन्य कीटों को रंग से आकर्षित करते हैं।

इंटरक्रॉपिंग: बगीचे में किसी एक सब्जी के बड़े ब्लॉक लगाने से बचें।

पतझड़ जुताई: पतझड़ की फसल के बाद सब्जी के बगीचे की जुताई करने से कीटों के अंडे पक्षियों के संपर्क में आ जाते हैं या सर्दियों में ठंड और विगलन के दौरान सूख जाते हैं।

जैविक कीटनाशक: बीटी (*बैसिलस थुरिंगिनेसिस*), पाइरेथ्रम्स, रोटेनोन, कीटनाशक साबुन, डायटोमेसियस अर्क, नीम और बागवानी तेलों सहित उपयोग के लिए कई जैविक कीटनाशक उपलब्ध हैं।

रो कवर: ये हल्के एवं काते हुए कपड़े होते हैं। इन्हें सब्जियों के ऊपर लटकाया या लपेटा जा सकता है ताकि उपज को उन्हें आक्रामक कीटों से बचाया जा सके।

रोपाई का समय: कई सब्जियों में कीटों की आबादी पूरे बढ़ते मौसम में चरम पर होगी। रोपण तिथि को समायोजित करके कीटों की अधिक आबादी से बचें। उदाहरण के लिए कटवर्म, एफिड्स और रूट मैगट वसंत ऋतु के शुरुआत में अधिक गंभीर हो जाते हैं। तापमान बढ़ने और वर्षा कम होने पर इनकी गंभीरता कम हो जाती है। ■

एकीकृत वर्टिकल न्यूट्री-फार्मिंग प्रणाली (आईवीएनएफएस)

आईवीएनएफएस मॉडल को मशरूम या मुर्गीपालन के साथ-साथ पौष्टिक सब्जियों की खेती हेतु तैयार किया गया था, जिससे ग्रामीण परिवारों के लिए सालभर आहार-विविधता सुनिश्चित की जा सके। इस मॉडल के अंतर्गत, सब्जियों और मशरूम के संयुक्त उत्पादन से सालाना 80 कि.ग्रा. सब्जियां और 50 कि.ग्रा. मशरूम का उत्पादन हुआ। इसी प्रकार, सब्जियों और कुक्कुट पालन से प्रति वर्ष 80 कि.ग्रा. सब्जियों के साथ-साथ 2016 अंडे और 35 कि.ग्रा. मांस प्राप्त हुआ। इस प्रौद्योगिकी का लाइसेंस उद्योग जगत को दिया गया। ■

(स्रोत: भाकृअनुप वार्षिक रिपोर्ट 2023-24)

आलू की जैविक खेती

प्रज्वल अग्निहोत्री*, **स्वप्निल सिंह**** और **संजीव कुमार***

आलू की खेती लगभग पूरे विश्व में की जाती है। इसकी सम्भावनाओं को देखते हुए आलू की जैविक खेती, किसानों के लिए वरदान साबित हो सकती है। आलू पौष्टिक तत्वों का खजाना है। इसमें स्टार्च, जैविक प्रोटीन, सोडा, पोटाश और विटामिन डी पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। ये मानव शरीर के लिए आवश्यक होते हैं। हालाँकि देश में आलू की जैविक खेती बड़े क्षेत्रफल में की जाती है, परन्तु अच्छी तकनीकी तथा जानकारी के आभव के कारण आलू उत्पादक इससे अच्छी पैदावार नहीं ले पाते हैं।

आलू की खेती ठंडे मौसम में जहाँ पाले का प्रभाव नहीं होता है, सफलतापूर्वक की जा सकती है। आलू के कंदों का निर्माण 20 डिग्री सेल्सियस तापक्रम पर सबसे अधिक होता है। जैसे-जैसे तापक्रम में वृद्धि होती जाती है, वैसे ही कंदों के निर्माण में भी कमी होने लगती है तथा 30 डिग्री सेल्सियस तापक्रम होने पर कंदों का निर्माण रुक जाता है।

उपयुक्त भूमि

आलू को क्षारीय के अलावा सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है। परन्तु जीवांशयुक्त रेतीली दोमट या दोमट भूमि इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम रहती है। इसकी खेती के लिए मिट्टी का पी एच मान 5.2 से 6.5 सर्वोत्तम माना गया है।

खेत की तैयारी

आलू के कंद मिट्टी के अन्दर तैयार होते हैं इसलिए मिट्टी का भुरभुरा होना नितांत आवश्यक है। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करें, दूसरी तथा तीसरी जुताई देसी हल या हैरो से करनी चाहिए।

बुआई का समय

इसकी मुख्य फसल अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवम्बर के द्वितीय सप्ताह में ली जाती है। जल्दी तैयार होने वाले आलू जब सितम्बर से अक्टूबर में बोये जाते हैं, तब इन्हें बिना काटे ही बोना चाहिए, क्योंकि काटकर बोने से ये गर्मी के कारण सड़ जाते हैं। इससे फसल पैदावार में भारी हानि होती है।

बीज उपचार

आलू की जैविक खेती हेतु बीजजनित व मृदाजनित रोगों से बचाव के लिए बीज को जीवामृत और ट्राइकोडर्मा विरिडी 50 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी के घोल के हिसाब से 15 से 20 मिनटों के लिए भिगोकर रखें, बिजाई से पहले इन्हें छाँव में सुखा लें। ध्यान दें, ट्राइकोडर्मा क्षारीय मृदा के लिए उपयोगी नहीं है।

उन्नत किस्में

अगेती किस्में- कुफरी चंद्रमुखी, कुफरी अलंकार, कुफरी पुखराज, कुफरी ख्याति, जिनकी पकने की अवधि 80 से 100 दिनों की है।

मध्यम समय वाली किस्में- कुफरी बादशाह, कुफरी ज्योति, कुफरी बहार, कुफरी लालिमा, कुफरी सतलुज, कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी पुष्कर जिनकी पकने की अवधि 90 से 110 दिनों की है।

देर से पकने वाली किस्में- कुफरी सिंदूरी और कुफरी बादशाह जिनकी पकने की अवधि 110 से 120 दिनों की है।

संकर किस्में- कुफरी जवाहर (जे एच-222), 4486-ई, जे एफ-5106, कुफरी (जे आई 5857) और कुफरी अशोक (पी जे-376) आदि हैं।

विदेशी किस्में- कुछ विदेशी किस्मों को या तो भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल पाया गया है या अनुकूल ढाला गया है। ये इस प्रकार हैं जैसे- अपटूडेट, क्रेग्स डिफाइन्स और प्रेसिडेंट आदि।

*सस्य विज्ञान विभाग, चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर, उत्तर प्रदेश-208002; **आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

बुआई की विधि

आलू की बुआई की विधियां इस प्रकार हैं, जैसे-समतल खेत में आलू बोना, समतल खेत में आलू बोकर मिट्टी चढ़ाना, मेड़ों पर आलू की बुआई, पोटैटो प्लांटर से बुआई, दोहरी कूँड़ विधि।

सिंचाई प्रबंधन

आलू उथली जड़ वाली फसल है इसलिए इसे निरंतर सिंचाई की आवश्यकता होती है। सिंचाई की संख्या और अंतर भूमि की किस्म मौसम पर निर्भर करते हैं। औसतन आलू की फसल की जल माँग 60 से 65 सेंटीमीटर होती है। बुआई के 3 से 5 दिनों बाद पहली सिंचाई हल्की करनी चाहिए। अधिक उपज के लिए यह आवश्यक है कि मिट्टी हमेशा नम रहे।

खरपतवार नियंत्रण

जैविक फसल के साथ उगे खरपतवार को नष्ट करने हेतु आलू की फसल में एक बार ही निराई-गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है, इसे बुआई के 20 से 30 दिनों बाद कर देना चाहिये। निराई-गुड़ाई करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि भूमि के भीतर के तने बाहर न आ जाएं, नहीं तो वे सूर्य की रोशनी से हरे हो जाते हैं।

जैविक खेती से प्राप्त स्वस्थ आलू

आलू की खुदाई

मिट्टी चढ़ाना

जब आलू के पौधे 10 से 15 सें.मी. ऊँचे हो जाएँ, तब उन पर मिट्टी चढ़ाने का कार्य बुआई के 25 से 30 दिनों बाद पहली सिंचाई के बाद करना चाहिए। यदि आलू की बुआई प्लांटर मशीन से की गई है, तब मिट्टी चढ़ाने की आवश्यकता नहीं होती है।

पौध संरक्षण

जैविक खेती में किसी भी प्रकार के रासायनिक पदार्थ का प्रयोग नहीं करना चाहिए। रोगों व कीटों का नियंत्रण कृषकों को कृषिगत, सस्य और जैविक विधि से करना होता है।

प्रमुख रोग

अगेती झुलसा- पत्तियों पर गहरे भूरे या काले रंग के धब्बे बनते हैं। बीच में कुण्डाकार घेरे स्पष्ट दिखाई देते हैं। ग्रसित पत्तियां सूखकर गिर जाती हैं। धब्बे पत्तियों के अतिरिक्त तनों पर भी दिखाई पड़ते हैं।

पछेती झुलसा- यह अत्यन्त भयंकर रोग है। इससे कभी-कभी सम्पूर्ण फसल नष्ट हो जाती है। पत्तियों पर भूरे मृत धब्बे, शुरू में पत्तियों के सिरे या किनारे से आरंभ होकर अन्दर की ओर नम मौसम में तेजी से बढ़ते हैं। इस रोग के तीव्र प्रकोप से सम्पूर्ण पौधा झुलस जाता है और अधिक प्रकोप होने पर कन्दों पर भी इसका फैलाव हो जाता है। अधिक आर्द्रता इसके फैलाव में सहायक होती है।

रोगों का एकीकृत प्रबंधन

- आलू की जैविक खेती हेतु 2 से 3 वर्षीय फसलचक्र अपनाना चाहिए।
- रोगरोधी प्रजातियां जैसे- कुफरी-नवीन, सिंदूरी, जीवन, बादशाह, ज्योति, सतलज, आनन्द, गिरीराज, मेघा, चन्दन, धनमलाई आदि को उगाना चाहिए।
- बीज की बुआई 4 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से ट्राइकोडर्मा द्वारा शोधित करके बुआई करनी चाहिए।
- आलू की जैविक खेती में रोगग्रस्त पत्तों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें।

प्रमुख कीट

माहूं- यह कीट पत्तियों व तनों का रस चूसकर क्षति पहुँचाता है। इसका प्रकोप होने पर पत्तियाँ पीली पड़कर गिर जाती हैं एवं यह मोजैक रोग के प्रसारण में भी सहायक होता है।

आलू का पतंगा- यह कीट आलू के कन्दों, खड़ी फसल और भण्डारण दोनों स्थानों पर क्षति पहुँचाता है। इसका वयस्क कीट आलू की आँखों में अण्डा देता है। इनसे 15 से 20 दिनों बाद सूंडियाँ निकलती हैं। ये सूंडियाँ कन्दों में घुसकर क्षति पहुँचाती हैं।

कटुआ- यह कीट खेत में खड़ी फसल तथा भण्डारित कन्दों, दोनों पर ही आक्रमण करता है। इस कीट की विकसित इल्ली लगभग 5 सें.मी. लम्बी होती है और पत्तियों, तनों आदि पौधों के वायुवीय भाग को काटकर अलग कर देती है। दिन के समय यह भूमि के भीतर छुपी रहती है और रात में फसल को नुकसान पहुँचाती है।

कीटों का एकीकृत (आईपीएम) प्रबंधन

- आलू की जैविक खेती के लिए गर्मी की गहरी जुताई करें।
- इसकी शीघ्र समय से बुआई करें।
- उचित जल प्रबंधन की व्यवस्था रखें।
- इसमें येलो स्टीकी ट्रैप का प्रयोग करें।
- माहूं के लिए आलू की जैविक खेती में नीमयुक्त कीटनाशी का प्रयोग करें।

पैदावार

आलू की जैविक खेती द्वारा पैदावार, भूमि के प्रकार, खाद का उपयोग, किस्म तथा फसल की देखभाल आदि कारकों पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से आलू की अगेती किस्मों से औसतन 250 से 400 क्विंटल और पिछेती किस्मों से 300 से 600 क्विंटल पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

यदि किसान बन्धु अपने खेत में रासायनिक पद्धति से हटकर आलू की जैविक पद्धति अपना रहे हैं, तो शुरू के 1 से 2 वर्ष तक उत्पादन में 5 से 15 प्रतिशत तक गिरावट संभव है। ■

सब्जी सोयाबीन की उच्च उपज

रवि शंकर पान*, मीनू कुमारी*, जयपाल सिंह चौधरी* और **अजित कुमार झा***

सब्जी सोयाबीन एक प्रमुख खरीफ मौसम की फसल है। इसके कच्चे हरे दाने बड़े आकार के मिठासयुक्त होते हैं। ये पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। इसकी हरी फलियां सितम्बर-अक्टूबर माह में तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती हैं और हरे मटर के दानों की तरह स्वादिष्ट सब्जी के रूप में इस्तेमाल की जाती हैं। सब्जी सोयाबीन की खेती से मृदा की उर्वराशक्ति बढ़ती है और यह फसलचक्र एवं फसल विविधीकरण के लिए एक उत्तम सब्जी की फसल है।

सब्जी सोयाबीन एक नयी फसल है। इसकी खेती पूर्वी भारत तथा अन्य प्रदेशों में खरीफ मौसम में जमीन पर वर्षा के आधार पर कम खर्च में आसानी से की जा सकती है। यह सोयाबीन, दालवाली सोयाबीन से अलग है। सब्जी सोयाबीन के कच्चे हरे दाने दाल-तिलहन वाली सोयाबीन के दानों से बड़े आकार के एवं अधिक मिठासयुक्त होते हैं। यह पाचन में आसान एवं मधुमेह रोगियों के लिए भी उपयोगी हैं। इसमें उपलब्ध आइसोफ्लेवोन तत्व कैंसर, हड्डी क्षय एवं हृदय रोग से प्रतिरोध क्षमता बढ़ाने के लिए लाभदायक होता है। सब्जी सोयाबीन में प्रोटीन (12-16%) के अलावा महत्वपूर्ण खनिज तत्व जैसे कैल्शियम (134 मि.ली. ग्राम/100 ग्राम), फॉस्फोरस (194 मि.ली. ग्राम/100 ग्राम), पोटेशियम (725 मि.ली. ग्राम/100 ग्राम), जिंक (1.42 मि.ली. ग्राम/100 ग्राम), आयरन (4.68 मि.ली. ग्राम/100 ग्राम) एवं अच्छी गुणवत्ता वाले कोलेस्ट्रॉल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।

*भाकृअनुप का पूर्वी अनुसंधान परिसर, कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, रांची-834010

मृदा और जलवायु

सब्जी सोयाबीन की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए, जैविक पदार्थों से भरपूर अच्छी जल निकासी वाली हल्की मिट्टी उत्तम होती है। सामान्यतः 26-30° सेल्सियस तापमान और उच्च आर्द्रता सब्जी सोयाबीन पौधों की अच्छी वृद्धि एवं विकास में सहायक होती है। इसकी किस्में प्रकाशकाल के प्रति संवेदनशील होती हैं। इसकी खेती के लिए खरीफ मौसम सर्वोत्तम है।

सब्जी सोयाबीन की फसल

खेत की तैयारी

मिट्टी को भुरभुरा बनाने के लिए अधिकतर 3-4 जुताइयां आवश्यक होती हैं। अम्लीय मिट्टी में, बुआई से एक महीने पहले 2.5 क्विंटल/हैक्टर की दर से चूना डाला जा सकता है। 15 सें.मी. ऊँची एवं 60 सें.मी. चौड़ी क्यारियों पर इसकी बुआई की जाती है। पॉलीथिन मल्च का प्रयोग खेतों में लाभदायक पाया गया है।

खाद एवं उर्वरक

खेत की तैयारी के समय 20-25 टन सड़ी गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिए। बुआई से पहले खेत में 45 किलोग्राम यूरिया, 37.5 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट और 70 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति हैक्टर डालना चाहिए। पुनः बुआई के 25-30 दिनों बाद 45 किलोग्राम यूरिया खड़ी फसल में टॉप ड्रेसिंग के रूप में डालना चाहिए। अधिक उपज के लिए फूल आने की अवस्था में 0.1% बोरेक्स का पत्तियों पर छिड़काव करना उपयुक्त होता है।

बुआई

बुआई का उपयुक्त समय 15 जून से 15 जुलाई है। खेतों में कम ऊँचाई वाली मेड़ों पर पंक्तियों में बुआई करनी चाहिए। क्यारियों में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सें.मी. और बीज से बीज की दूरी 30 सें.मी. होनी चाहिए। बीज की बुआई 2-3 सें.मी. गहराई पर करें। बीज दर 60-65 किग्रा/हैक्टर है।

फसल की देखरेख

बीजों के उचित अंकुरण के लिए, यदि बुआई के समय वर्षा न हो तो बुआई से एक या दो दिन पहले एक हल्की सिंचाई की जा सकती है। वर्षा आधारित फसल होने के कारण सिंचाई की आवश्यकता लगभग शून्य होती है। पहली निराई-गुड़ाई, बुआई के 10-15 दिनों के अन्दर एवं दूसरी, बुआई के 25-30 दिनों बाद की जा सकती है और फिर यूरिया को पौधों की जड़ों के पास टॉप ड्रेसिंग के रूप में डाला जा सकता है।

कटाई, ग्रेडिंग और विपणन

सब्जी सोयाबीन की हरी फलियों की

सब्जी सोयाबीन की फलियां

कटाई फूल आने के 30-40 दिनों बाद की जा सकती है। जब फलियों के अंदर बीजों का विकास 80-90% हो जाता है, तो फलियां हरी फसल के लिए तैयार हो जाती हैं। फलियों की ताजगी और हरा रंग बनाए रखने के लिए कटाई सुबह या शाम के समय की जा सकती है। कटी हुई हरी फलियों से छिलके वाले हरे ताजे बीजों की प्राप्ति 50 या >50% होती है।

विपणन और निर्यात उद्देश्य के लिए फलियों का वर्गीकरण महत्वपूर्ण है। कटाई के बाद, फलियों को बीज/फली की संख्या के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। 2-3 बीज वाली फलियों को बाजार में अधिक कीमत मिलती है।

बीज उत्पादन

बीज फसल की उत्पादन तकनीक वही है जो हरी फली की कटाई के लिए अपनाई जाती है। जल्दी पकने वाली किस्मों के मामले में, बीज वाली फसल जुलाई में बोयी जा सकती है ताकि सूखी फली की कटाई के दौरान मौसम शुष्क रहे और बीज निकालने और सुखाने में आसानी हो। स्व-परागण वाली फसल होने के कारण, आधार और प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए पृथक्करण दूरी क्रमशः 50 मीटर और 25 मीटर होनी चाहिए। कटाई के समय, बीजों में नमी की मात्रा 15-17% होनी चाहिए। किस्मों के आधार पर परिपक्वता 90 से 120 दिनों तक होती है। चूँकि बीजों का छिटकना मुख्य समस्या है, इसलिए तुड़ाई सुबह के समय की जानी चाहिए। बीजों को 12% नमी के स्तर तक अच्छी तरह से साफ करके सुखाया जाना चाहिए। सब्जी सोयाबीन की बीज उपज 0.9-1.2 टन/हैक्टर तक होती है।

उन्नत किस्में

स्वर्ण वसुन्धरा: इस किस्म को आईसीएआर-आरसीईआर अनुसंधान केंद्र, रांची में विकसित किया गया है। यह मुख्यतः 2-3 बीज वाली फलियाँ पैदा करती है। इसमें 50% फूल आने में 40-45 दिन लगते हैं। हरी फलियाँ बुआई के 75-80 दिनों में पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती हैं। हरी फली की उपज 12-15 टन/हैक्टर होती है।

एचएवीएसबी-24: यह एक सुगंधित फलियों वाली किस्म है। इसकी हरी फलियों से निकले बीजों को गर्म पानी में पकाने के दौरान बासमती धान की तरह सुगंध निकलती है। यह कम अवधि वाली किस्म है और बुआई के 60-65 दिनों मे पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इसकी हरी फलियों की उपज क्षमता 13-15 टन/हैक्टर है।

सब्जी सोयाबीन के दाने

कीटों एवं रोगों का नियंत्रण

पत्ती खाने वाले पिल्लू: सोयाबीन में पत्ती खाने वाले पिल्लू, फसल को काफी नुकसान पहुंचा रहे हैं। पौधों के पत्ते झड़ने के बाद, लार्वा फूलों और फलियों को भी खाते हैं। इनके नियंत्रण के लिए साइपरमेथ्रिन 10% ईसी / 750 मिली/हैक्टर या इंडोक्साकार्ब 14.5% एसी/ 300 मिली/हैक्टर का छिड़काव उनकी संभावित आबादी (10/मीटर पंक्ति की लंबाई) होने पर करें।

गर्डल बीटल: अंकुरण अवस्था में जमीन से लगभग 15 से 25 सें.मी. ऊपर शाखा या तने पर दो गोलाकार कटों की उपस्थिति गर्डल बीटल संक्रमण का विशिष्ट लक्षण है। इसके लिए 0.03% डाइमेथोएट 30 ईसी या 0.05% क्विनालफॉस 25 ईसी के एक या दो छिड़काव से आगे की क्षति रोकी जा सकती है।

रस्ट: प्रभावित पौधों की पत्तियों पर भूरे, गहरे और भूरे रंग के घाव दिखाई देते हैं। जंग के संक्रमण को प्रबंधित करने के लिए हैक्साकोनाजोल/1 मि.ली./लीटर पानी में मिलाकर डाला जाता है।

मोजैक: इस वायरस रोग में पत्तियों पर हल्के हरे और गहरे हरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। इसकी रोकथाम हेतु थियामेथोक्सॉम 25% WG/0.5 ग्राम/लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 SL /0.5 मि.ली./लीटर पानी का छिड़काव करने से कीटवाहक एफिड को नियंत्रित किया जा सकता है।

सब्जियों की बहुफसली प्रणाली

हरजोत सिंह सोही*, **संदीप कुमार*** और **पी.एस. तंवर***

सब्जियों की बहुफसली खेती में, एक ही भूमि पर दो से अधिक सब्जियां उगाई जाती हैं। इससे अधिकतम उत्पादन प्राप्त होता है। यह दृष्टिकोण आय में वृद्धि, सालभर रोजगार, संतुलित उर्वरक उपयोग, फसलचक्र के माध्यम से मृदा स्वास्थ्य रखरखाव और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण जैसे लाभ प्रदान करता है। अच्छे उत्पादन की सफलता किस्मों के सावधानीपूर्वक चयन, उचित बुआई के तरीकों, कुशल संसाधन उपयोग, कीट प्रबंधन, समय पर कटाई और प्रभावी विपणन पर निर्भर करती है।

पोषक तत्वों से भरपूर सब्जियां अच्छे स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। ये उत्तरी भारत में कृषि विविधीकरण में योगदान करती हैं। स्वस्थ आहार के लिए प्रति व्यक्ति 280 ग्राम की दैनिक खपत की सिफारिश के बावजूद, वास्तविक खपत अपर्याप्त है। सीमित भूमि संसाधनों (सब्जी उत्पादन के तहत 6.68%) के साथ, बहुफसली खेती सहित उन्नत तकनीकों को अपनाने से मांग और सब्जी उत्पादन के बीच अंतर को काफी हद तक कम किया जा सकता है। भरपूर उत्पादन के लिए निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है:

- जो सब्जियां समान कीटों या रोगों के प्रति संवेदनशील होती हैं, जैसे कि टमाटर और मिर्च, उन्हें फसल प्रणाली में एक साथ या एक के पीछे एक नहीं बोया जाना चाहिए।
- गहरी जड़ वाली सब्जियों के बाद उथली जड़ वाली सब्जियां लगानी चाहिए ताकि वे मिट्टी की सभी परतों से पोषक तत्व ग्रहण कर सकें।
- मटर और सेम जैसी फलियां शामिल करना बहुत फायदेमंद है। ये फसलें वातावरण से नाइट्रोजन ग्रहण करती हैं और गैर-फलीदार वाली फसलों के लाभ के लिए इसे मिट्टी में जमा करती हैं।

*कृषि विज्ञान केंद्र, बरनाला

फूलगोभी

रिले क्रॉपिंग प्रणाली

इस प्रणाली के तहत, एक ही वर्ष में एक ही भूमि पर अलग-अलग सब्जियाँ उगाई जाती हैं, लेकिन अगली फसल पिछली फसल की कटाई से पहले बोई जाती है।

- **ककड़ी-मिर्च:** (नवंबर-मार्च) - (फरवरी-अक्टूबर), (मिर्च फरवरी में मेड़ों पर लगाई जाती है)
- **मटर-लौकी:** (नवंबर-अप्रैल) - (फरवरी-अक्टूबर), (सर्दियों में लौकी की नर्सरी प्लास्टिक की थैलियों में तैयार की जाती है और फरवरी में तैयार क्यारियों के दोनों ओर 2.5 मीटर और 45 सेंमी. की दूरी पर रोपाई की जाती है।)
- **ककड़ी-स्पंज लौकी:** (नवंबर-अप्रैल) - (मार्च-अक्टूबर) (मार्च में, ककड़ी में तैयार जल मेड़ों के वैकल्पिक किनारे पर 3 मीटर की दूरी पर स्पंज लौकी लगाएं)

सब्जी बहुफसली प्रणाली में विभिन्न विधियों का उपयोग किया जाता है।

फसल चक्र

इस प्रणाली में, भूमि के एक ही टुकड़े पर एक के बाद एक कई फसलें उगाई जाती हैं:

- **आलू-प्याज-हरी खाद:** (सितंबर-दिसंबर)-(दिसंबर-मई)-(जून-जुलाई)
- **आलू-पछेती फूलगोभी-मिर्च:** (अक्टूबर- दिसंबर)-(दिसंबर-मार्च)-(मार्च-अक्टूबर)
- **आलू-भिंडी-अगेती फूलगोभी:** (नवंबर- फरवरी)- (मार्च-जुलाई)-(जुलाई-अक्टूबर)

पत्तागोभी

बहुस्तरीय प्रणाली

यह प्रणाली स्थान और समय के उचित उपयोग के साथ उपयुक्त फसलें अपनाकर उपलब्ध भूमि पर अधिकतम फसल वृद्धि सुनिश्चित करती है। इस तकनीक के अंतर्गत फसल का चयन एवं बुआई प्रमुख भूमिका निभाते हैं। बहुस्तरीय प्रणाली के तहत, पहले स्तर में मिट्टी के नीचे उगाई जाने वाली फसलें शामिल हैं, जबकि दूसरे स्तर में मिट्टी की सतह पर उगाई जाने वाली सब्जियां शामिल हैं। बहुस्तरीय प्रणाली के तीसरे स्तर में बेल वाली सब्जियां शामिल हैं। इस तकनीक से खेती का कुल क्षेत्रफल बढ़ जाता है और अधिक उपज के साथ-साथ लागत भी कम हो जाती है। सब्जियाँ इस प्रकार से बोई जा सकती हैं:

- खीरावर्गीय सब्जियां + प्याज/लहसुन + धनिया
- खीरावर्गीय सब्जियां + भिंडी + प्याज
- खीरावर्गीय सब्जियां + मिर्च + प्याज
- खीरावर्गीय सब्जियां + पालक/मेथी + गाजर/मूली
- मटर + आलू + मिर्च

ब्रोकोली

- **आलू-गाजर/मूली (बीज के लिए) - भिंडी (बीज के लिए):** (अक्टूबर-जनवरी)-(जनवरी-मई)-(जून-अक्टूबर)
- **मटर-मिर्च:** (अक्टूबर-फरवरी)-(मार्च-सितंबर)

अंतरफसल प्रणाली

इस प्रणाली में एक ही भूमि पर अलग-अलग सब्जियों को पास की पंक्तियों में रोपना शामिल है। इससे इनकी विभिन्न विकास विशेषताओं को सुनिश्चित किया जा सकता है। तेजी से बढ़ने वाली फसलों के साथ धीमी गति से बढ़ने वाली, उथली जड़ वाली के साथ मूसला जड़ वाली, लंबे समय तक पकने वाली के साथ कम समय में पकने वाली और फलियों वाली के साथ गैर-फलीदारं फसले जोड़ी जाती हैं। इन विभिन्न प्रजातियों में से फसलों का चयन करें। उदाहरणों में खीरा-शिमला मिर्च की एक साथ रोपाई, नवंबर के अंत में खीरा + करेला, खीरा + मिर्च और नवंबर के अंत में खीरा + करेला + शिमला मिर्च की बुआई शामिल है। इसी प्रकार गन्ने की दीर्घकालीन फसल में लहसुन, मटर, सेम तथा पत्तागोभी की खेती अन्त:फसल के रूप में की जा सकती है। इस प्रकार केवल गन्ने की फसल से अधिक आय प्राप्त की जा सकती है।

अधिकांश सब्जियों की फसलें कम अवधि की होती हैं और कई अनुक्रमों में अच्छी तरह से सटीक बैठती हैं। इनके परिणामस्वरूप प्रति इकाई क्षेत्र और समय में अधिक उत्पादन होता है। इन सब्जी चक्रों की सफलता उचित किस्मों के चयन, बुआई के समय के समायोजन, जैविक खादों, उर्वरकों और सिंचाई के पर्याप्त प्रयोग, खरपतवारों, कीटों और रोगों के नियंत्रण तथा फसलों की समय पर कटाई पर निर्भर करती है। सब्जियों के मामले में एक सफल बहुफसली कार्यक्रम में इन सांस्कृतिक कार्यों की समयबद्धता एक अत्यधिक महत्वपूर्ण कारक बन जाता है। ■

उत्तराधिकार फसल प्रणाली

इसके अंतर्गत भूमि के एक ही टुकड़े पर दो या दो से अधिक सब्जियां क्रम से उगाई जाती हैं। यह प्रणाली आमतौर पर देश के प्रमुख सब्जी उत्पादक क्षेत्रों में अपनाई जाती है।

- **बैंगन-पछेती फूलगोभी-लौकी*:** (जून-अक्टूबर)-(नवंबर-फरवरी)-(फरवरी-जून) (*लौकी की नर्सरी सर्दियों में प्लास्टिक की थैलियों में तैयार की जाती है)
- **फूलगोभी-टमाटर लो टनल- भिंडी:** (सितंबर-नवंबर)-(दिसंबर-मई)-(मई-सितंबर)
- **फूलगोभी-प्याज-भिंडी:** (अक्टूबर-जनवरी)-(जनवरी-मई)-(मई-सितंबर) सूत्रकृमि प्रभावित खेतों में इस फसलचक्र को अपनाएं। इससे सूत्रकृमि की आबादी कम हो जाती है।
- **आलू-खरबूजा*-मूली:** (सितंबर-जनवरी)-(फरवरी-मई)-(जून-अगस्त) (*खरबूजे की नर्सरी सर्दियों में प्लास्टिक की थैलियों में तैयार की जाती है)
- **पालक-गोभी-मिर्च:** (अगस्त-अक्टूबर)-(अक्टूबर-फरवरी)-(फरवरी-अगस्त)
- **लोबिया-फूलगोभी-प्याज:** (जून-अक्टूबर)-(अक्टूबर-जनवरी)-(जनवरी-मई)
- **आलू-प्याज-भिंडी:** (अक्टूबर-जनवरी)-(जनवरी-मई)-(मई-अक्टूबर)
- **अगेती फूलगोभी-मटर-मूली:** (जुलाई-सितंबर)- (अक्टूबर-मार्च)- (अप्रैल-जून)
- **बैंगन-मटर-पालक:** (जून-नवंबर)-(नवंबर-अप्रैल)-(अप्रैल-जून)
- **आलू-भिंडी-अगेती फूलगोभी:** (नवंबर-फरवरी)-(मार्च-जुलाई)-(जुलाई-सितंबर)

दियारा में कद्दूवर्गीय सब्जियां

दीपक मौर्य*, **कृपा शंकर**** और **शिव सिंह तोमर***

वर्तमान में उत्तर भारतीय कृषकों द्वारा कद्दूवर्गीय सब्जियों को बड़े पैमाने पर उगाया जाता है। बेमौसमी सब्जियों की खेती को रिवरबेड्स (दियारा लैंड, रिवरबैंक फार्मिंग, बागर खेती या बलुआ खेती) कहा जाता है। रिवरबेड जिसे दियारा भूमि के रूप में भी जाना जाता है, एक बेसिन या नदी की दो या दो से अधिक धाराओं के बीच का क्षेत्र है। यह कई स्थानीय नामों से खादर, कछार, दोआब, दरियारी, कोचर, नाद और नदियारी के रूप में जाना जाता है। दियारा 'दीया' शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है मिट्टी का दीपक। दियारा भूमि के उत्तर प्रदेश, बिहार, असोम और ओडिशा में पाए जाने वाले बड़े क्षेत्र हैं। ये जमीन थोड़े समय के लिए ही उपलब्ध होती हैं और भूमिहीन, छोटे पैमाने और सीमांत किसान इन पर मौसमी सब्जियों और फलों की खेती करते हैं।

किसान, मानसून के बाद नदी के किनारे की खाई में खेत तैयार करते हैं और सब्जियों और फलों की खेती करते हैं। तरबूज (*सिट्रुलस लैनाटस*) शुरुआत में नदी के किनारे उगाई जाने वाली पहली और एकमात्र फसल थी, बाद में कई फसलें जो कद्दूवर्गीय परिवार से संबंधित थीं, जैसे कि लौकी (*लगेनेरिया सिसेरिया*), ककड़ी (*कुकुमिस सैटिवस*), कद्दू (*कुकुरबिटा पेपो*) और समर स्क्वैश करेला (*मोमोर्डिका चरैन्टिया*), परवल (*ट्राइकोसेंथेस डायोइका*), नेनुआ (तोरई)(*लूफासिलिंडरिका*) आदि भी उगाई जाने लगीं।

इनकी खेती नदी के किनारों पर की जाती है। मानसून के मौसम के बाद, नदी के किनारों से पानी वापस चला जाता है। इससे बड़े क्षेत्र सूख जाते हैं। प्रबंधन में तपस्या, भूमि स्वामित्व के संघर्ष, कठिन पहुंच और सीमांत भूमि पर खेती करने के लिए समग्र प्रेरणा की कमी के कारण भूमि के इन क्षेत्रों को आमतौर पर अप्रयुक्त छोड़ दिया जाता है। हालांकि, ये दियारा क्षेत्र प्राकृतिक संसाधनों की विविधता प्रस्तुत करते हैं। दियारा खेती का उचित प्रबंधन आय सृजन के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों (खनिज, वन, जैव विविधता, जल, पारिस्थितिकी और बदलती जलवायु) और बेहतर आपदा/जोखिमों के प्रबंधन में योगदान देगा। इन मुद्दों के अलावा, नदी के किनारे, भूमिहीन और गरीब लोगों के लिए आय सृजन और खाद्य सुरक्षा के अवसर प्रदान करते हैं। नदी के किनारे पर खेती का स्वरूप अलग प्रकृति का होता है। यहां बड़ी संख्या में समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यह सिंचाई, उर्वरता और बीज की समस्या आदि से संबंधित है।

दियारा खेती का महत्व

इस खेती में नदी के किनारे की सामान्य भूमि पर सब्जी की खेती की जाती है जो मानसून के बाद के मौसम यानी अक्टूबर से मई के दौरान होती है। नदी का पानी घटने के बाद, सब्जियों को मौसमी रेत के किनारों में खोदे गए गड्ढों में लगाया जा सकता है और अगले मानसून की शुरुआत से पहले फसल की कटाई की जा सकती है।

देश के कुल कद्दूवर्गीय फसली क्षेत्र का लगभग 65% नदी तल के अंतर्गत आता

सारणी: दियारा में फसल की अवधि और सब्जियों की उपज (क्विं/है.)

सब्जियां	बोने का समय	कटाई का समय	औसत उपज (क्विं/है.)
लौकी	नवंबर-दिसंबर	मार्च-जुलाई	200-350
करेला	फरवरी-मार्च	मई-जुलाई	100-150
परवल	नवंबर-दिसंबर	मार्च-जुलाई	350-400
तोरई	अप्रैल-मई	जून-जुलाई	100-200
स्पंज गार्ड	जनवरी-फरवरी	अप्रैल-मई	100-200
खीरा	जनवरी-फरवरी	मार्च-जून	225-250

*कृषि विद्यालय, जी.डी. गोयनका विश्वविद्यालय, सोहना, गुरुग्राम, हरियाणा; **फल एवं बागवानी प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली

पौधे में गोबर की खाद डालने की विधि

है। इसका उपयोग घरेलू आय बढ़ाने और भूमिहीन तथा आर्थिक रूप से कमजोर लोगों की खाद्य सुरक्षा में सुधार के लिए किया जा सकता है। इस प्रथा का अधिकांश विस्तार मुख्य रूप से उर्वरकों और पोषक तत्वों सहित, उन्नत कृषि तकनीकों एवं नदी के किनारे की आसानी से उपलब्धता, परिवहन तथा बाजारों तक पहुंच के कारण हुआ है। यह विधि किसी भी अन्य फसलचक्र से संबंधित नहीं है और खीरावर्गीय पौधों को इस प्रणाली के लिए अनुकूलित किया जाता है।

लाभ

दियारा खेती के निम्न फायदे हैं:

- प्रति इकाई क्षेत्र शुद्ध लाभ
- बहुत जल्दी और उच्च उपज
- सिंचाई में आसानी
- खेती की लागत बहुत कम
- उच्च उर्वरता के कारण कम खनिज की आवश्यकता
- सीमित खरपतवार
- पारंपरिक साधनों द्वारा कीट और रोग का नियंत्रण संभव
- कम लागत वाली श्रम सुविधाएं
- भूमिहीन और सीमांत किसानों की आय और खाद्य सुरक्षा की सुनिश्चितता

उपयुक्त मृदा

अच्छी जल निकासी वाली दोमट मिट्टी कद्दूवर्गीय फसलों के लिए अधिक वांछनीय होती है। हल्की मिट्टी जो झरनों में जल्दी गर्म हो जाती है, आमतौर पर शुरुआती पैदावार के लिए उपयोग की जाती है। भारी मिट्टी में बेल की वृद्धि अधिक होगी और फल देर से परिपक्व होंगे। रेतीली दोमट मिट्टी में नदी-तलों में जलोढ़ जीवांश और नदी की धाराओं की भूमिगत नमी कुकुरबिट्स का समर्थन करती है। वास्तव में, एक लंबी मूसला जड़ प्रणाली नदी तल में कद्दूवर्गीय पौधों की वृद्धि के अनुकूल होती है। इस प्रकार की मिट्टी में गर्मियों में दरार नहीं पड़नी चाहिए और बरसात के मौसम में जलभराव नहीं होना चाहिए तथा मिट्टी उपजाऊ होनी चाहिए एवं पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ प्रदान किए जाने चाहिए। सभी कद्दूवर्गीय पौधे अम्लीय मिट्टी के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं। अधिकांश कुकुरबिट्स 6.0 और 7.0 पीएच मान के बीच की मिट्टी को पसंद करते हैं। कस्तूरी तरबूज, मिट्टी की अम्लता के प्रति थोड़ा सहिष्णु है, जबकि अन्य कद्दूवर्गीय मध्यम या सामान्य पीएच मान चाहते हैं। हालांकि, भारी नमक जमाव वाली क्षारीय मिट्टी खीरावर्गीय फसलों के लिए अनुपयुक्त होती हैं और तरबूज ही एकमात्र उपज है जो लवणों के प्रति थोड़ा सहिष्णु है।

मिट्टी का तापमान

शीघ्र अंकुरण, शीघ्र परिपक्वता और उत्पादन के लिए मिट्टी का तापमान भी एक निर्धारक कारक है। उचित वृद्धि और विकास के लिए न्यूनतम तापमान 10° सें. और अधिकतम 25° सें. से नीचे नहीं जाना चाहिए। इष्टतम सीमा लगभग 18-22° सें. होनी चाहिए।

रोपण विधि

रोपण विधियाँ विभिन्न प्रकार की होती हैं। अधिकांश किसान रोपण के लिए या या डिच प्रणाली का चयन करते हैं। यह किसानों की प्राथमिकताओं और श्रम की उपलब्धता पर भी निर्भर करता है।

गड्ढा विधि

इसमें 0.5 मीटर व्यास के गड्ढे 1 मीटर गहरे और 1 से 3 मीटर तक खोदे जाते हैं। इनमें फसलों के आधार पर भी लगाए जाते हैं और इन्हें कई बीजों के साथ लगाया जाता है। इस विधि में फसलों को क्यारियों में लगाया जाता है।

खाई विधि

इस विधि में, पंक्ति के साथ 1 मीटर गहरी खाई खोदी जाती है। इनमें पंक्तियों के बीच 1 से 2 मीटर (ककड़ी, करेला और लौकी) या 3 मीटर (तरबूज, लौकी, कद्दू और स्क्वैश) की जगह होती है। बीज खाई में 0.5 मीटर (ककड़ी, करेला) से 1 मीटर (तरबूज, लौकी, और कद्दू) के बीच लगाए जाते हैं।

बीज दर, बीजोपचार एवं बुआई/रोपाई का समय

आवश्यक बीज दर उगाई जाने वाली फसलों पर निर्भर करती है। हालांकि

नदी के किनारे स्वस्थ बढ़ते हुए पौधे

एक नजर में दियारा खेती

सामान्यतया एक हैक्टर क्षेत्र में ककड़ी के लिए 1.5 से 3 कि.ग्रा., करेला और लौकी के लिए 3.5 से 5 कि.ग्रा., लौकी और तोरई के लिए 2.5 से 3 कि.ग्रा. बीज दर का प्रयोग किया जाता है। बीजों की बुआई अगेती फसल के लिए सामान्यत: नवंबर के पहले और दूसरे सप्ताह में तथा कुछ दिसंबर के पहले सप्ताह में की जाती है। देर से बुआई जनवरी के पहले सप्ताह में की जाती है। बीजों को खाई में 45-60 सें.मी. की दूरी पर 3 से 4 सें.मी. की गहराई पर बोया जाता है।

कुछ कृषक नम बीजों को जूट की थैलियों में लपेट देते हैं। रेशे के जाले के पास अरंडी के पत्ते शीघ्र अंकुरण के लिए तैयार हो जाते हैं। इस प्रकार 5-6 दिनों के बाद अंकुरण शुरू हो जाता है। जैसे ही बीजावरण के बाहर अंकुर दिखाई देने लगते हैं, उन्हें लगा दिया जाता है। आमतौर पर, 3-4 पूर्व-अंकुरित बीजों को गड्ढों में बोया जाता है लेकिन आंध्र प्रदेश में एक सप्ताह पुराने बीजों को गड्ढों या खाई में लगाया जाता है।

खाद और उर्वरक

आमतौर पर दियारा खेती के लिए खाद और उर्वरकों का उपयोग नहीं किया जाता था। अब किसान उर्वरकों का उपयोग करने लगे हैं और चूंकि फसल केवल एक मौसम के लिए ली जाती है, इसलिए जैविक खाद और उर्वरकों का उपयोग किया जाता है। एफवाईएम या अच्छी तरह से विघटित खाद, मूंगफली या अरंडी की खली का उपयोग पहले प्रयोग में किया जाता है। जैविक खाद अंकुरित बीजों या बढ़ते पौधों को कुछ प्रकार की गर्मी प्रदान करते हैं। फीडिंग जोन में नमी को बनाए रखने के लिए आमतौर पर नदी की गाद का उपयोग किया जाता है। बुआई के 25 से 30 दिनों के बाद, विकास और मौसम की स्थिति के आधार पर, दो विभाजित खुराकों में रासायनिक उर्वरकों यूरिया या नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों की टॉप ड्रेसिंग की जाती है। टॉप ड्रेसिंग को पौधों से दूर उथली खाइयों में लगाया जाता है।

खरपतवार प्रबंधन

दियारा भूमि क्षेत्रों में प्रमुख खरपतवार *पॉलीगोनम स्पीशीज यूफोरबिया हिर्टा, एक्लिप्टा प्रोस्ट्रेटा, सिडा स्पीशीज* और *फिम्ब्रिस्टलीलिस डाइकोटोमा* आदि हैं। इन खरपतवारों को हाथों से खींचकर निकाला जा सकता है, क्योंकि अतिरिक्त रेत के कारण मिट्टी काफी ढीली हो जाती है। फसल में खरपतवारनाशी का उपयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि यह नदी के बहते पानी में मिल सकता है और मानव, पशु और मछलियों के लिए हानिकारक साबित हो सकता है।

फसल पद्धति

उत्तर भारत में ककड़ी, लौकी, स्पंज लौकी तथा राजस्थान, मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश में तोरई तथा बिहार में परवल लगाया जाता है।

फलों की तुड़ाई

कटाई, फसल और प्रबंधन पर निर्भर होनी चाहिए। आमतौर पर खीरे की कटाई तब की जाती है जब फल काफी कोमल और खाने योग्य होते हैं जैसे करतोली, ककरोल और परवल। ये रोपाई के 50, 60 और 80 दिनों के बाद क्रमश: फूलना शुरू कर देते हैं। परिपक्व फलों की तुड़ाई 3 से 4 दिनों के अंतराल पर करनी चाहिए, अन्यथा गुणवत्ता में गिरावट आने लगती है और बीज पकने के कारण फल सख्त हो जाते हैं। हालांकि, जून के अंत से अक्टूबर के अंत तक नियमित अंतराल पर कटाई की जाती है।

उपज, विपणन और भंडारण

स्थान और मिश्रित फसल बनाने वाली फसलों की संख्या के आधार पर विभिन्न खीरे की उपज नदी तल से स्वाभाविक रूप से भिन्न होती है। खरबूजे के फल बाजार में फरवरी-मार्च में, महाराष्ट्र और राजस्थान में अप्रैल में, पश्चिम उत्तर प्रदेश तथा हरियाणा में जून तक आते हैं। बेमौसमी बारिश या नदियों में बाढ़ के वर्षों में, फसल खराब हो जाती है। इसके लिए फिर से बुआई करनी पड़ती है।

मिश्रित फसल की स्थिति में कुछ फायदे हैं। यह नदी के किनारे के किसानों को मार्च से जून तक लगातार आय देती है और किसी भी फसल के नुकसान या विफलता को कम करती है। आमतौर पर खीरे के फल बनने के तुरंत बाद तेजी से पकते हैं। खाने योग्य परिपक्वता की सही अवस्था और नियमित अंतराल पर फलों की तुड़ाई व्यक्तिगत किस्म पर निर्भर करती है। सलाद वाली ककड़ी में, गहरे हरे रंग की त्वचा का रंग भूरा पीला नहीं होना चाहिए। जंग लगने और सफेद रीढ़ का रंग खाद्य परिपक्वता के लिए एक उपयुक्त संकेत देता है। छोटे फल वाले प्रकार में, पीली हरी त्वचा का रंग भी खाद्य परिपक्वता का संकेत है। कस्तूरी तरबूज की खेती के दो समूह हैं जो अलग-अलग व्यवहार करते हैं। एक समूह में, जब फल परिपक्व हो जाता है, बेल से आसानी से निकल जाता है जैसे लखनऊ सफेदा, दुर्गापुरा मधु, संयुक्त राज्य अमेरिका के खरबूजे आदि। खरबूजे के अन्य समूह जैसे हनीड्यू और कसाबा, फल अलग नहीं होते हैं।

■

माइक्रोग्रीन्स हैं पोषक तत्वों से भरपूर

मनोज पुनासिया*, **रोशनी अग्निहोत्री****, **हेमलता सिंह**** और **लवकुश सिंह***

मानव जीवन में स्वस्थ और पौष्टिक आहार का अत्यंत महत्व है। अनेक आहारी उत्पादों में पोषक तत्वों की कमी होने से हमारी सेहत पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। इस संदर्भ में, माइक्रोग्रीन्स एक उत्कृष्ट विकल्प हैं। ये छोटे पर पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। ये खाद्य वर्गीय उत्पाद हैं जो विभिन्न खाद्य उत्पादों में उपयोग किए जा सकते हैं और सेहत के लिए बेहद लाभकारी होते हैं। इस लेख में हम माइक्रोग्रीन्स क्या होते हैं, महत्व, उपयोग और उगाने के तरीके पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

माइक्रोग्रीन्स छोटे पौधों की उगाई गई सब्जियों के छोटे अंश होते हैं। ये अक्सर बीजों से 10-15 दिनों में ही उगकर उपयोग के लिए तैयार हो जाते हैं। इनकी जड़, तना और छोटी पत्तियां बहुत ही स्वादिष्ट व विभिन्न पोषक तत्वों से भरपूर होती हैं, जैसे कि विटामिन, प्रोटीन, एंटीऑक्सीडेंट्स और खनिज आदि।

माइक्रोग्रीन्स को घर पर बड़ी सहजता से उगाया जा सकता है, जो पौष्टिक आहार में सहायक होता है। माइक्रोग्रीन्स का उच्च-स्तरीय शहरी होटलों में सलाद, सूप, सैंडविच, आदि में व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है। बढ़ती महंगाई और रोगों के कारण लोगों ने अपनी जीवनशैली के साथ-साथ खाने-पीने में भी बदलाव किया है। स्वयं को स्वस्थ रखने के लिए कई तरीके अपनाए हैं। इस संदर्भ में किसानों द्वारा नई तकनीकों का उपयोग कर पोषक फसलों का उत्पादन किया जा रहा है। पोषक फसलों की बात आती है तो सबसे पहले सब्जियों का नाम लिया जाता है। अब माइक्रोग्रीन्स के रूप में यह एक नई शुरुआत है। इसे लोग अपने घर पर ही उगाकर पोषण तत्वों की प्राप्ति कर सकते हैं।

स्प्राउट्स और माइक्रोग्रीन्स

स्प्राउट्स और माइक्रोग्रीन्स में अंतर है कि स्प्राउट्स में हम बीजों को अंकुरित करते हैं जबकि माइक्रोग्रीन्स में हम नन्हे-नन्हे पौधे तैयार करते हैं, जो 5 से 6 इंच तक होते हैं। हम इन पौधों का तना, पत्ती और बीजपत्र का उपयोग करते हैं। स्प्राउट्स में हम अंकुरित बीजों, जड़, तना और बीजपत्र को खाने में प्रयोग करते हैं, लेकिन माइक्रोग्रीन्स में हम तने, पत्तियां, और बीजपत्र का ही उपयोग करते हैं, और जड़ों का नहीं हैं।

माइक्रोग्रीन्स उगाने के फायदे

माइक्रोग्रीन्स पोषण से भरपूर होते हैं। इनकी खेती से बहुत मुनाफा कमाया जा सकता है। किसी भी फसल को उगाना तो बहुत आसान होता है, लेकिन लंबे समय तक देखभाल करना बहुत मुश्किल हो सकता है। इसमें विभिन्न चुनौतियां हो सकती हैं, जैसे कि रोग, बारिश, बाढ़ या सूखा के कारण फसल को नुकसान आदि। इसके विपरीत, माइक्रोग्रीन्स बहुत कम समय में तैयार हो जाते हैं, जिससे नुकसान की आशंका कम होती है। इनका उपयोग अधिकतर आर्थिक रूप से समर्थ लोग करते हैं और विशेषज्ञ शेफ्स इन्हें अपने व्यंजनों को सजाने और पोषण में वृद्धि करने के लिए इस्तेमाल करते हैं।

विश्व की बढ़ती जनसंख्या के कारण खेती योग्य भूमि कम हो रही है। ऐसी स्थिति में माइक्रोग्रीन्स एक अच्छी खेती साबित हो सकती है क्योंकि इसे बहुत कम स्थान और कम समय में उगाया जा सकता है। हालांकि माइक्रोग्रीन्स छोटे होते हैं, लेकिन उनका स्वाद और पोषण अन्य सभी सब्जियों से सर्वोत्तम होता है। कुछ माइक्रोग्रीन्स किस्मों में उगाई गई सब्जियों की तुलना में 40 गुना अधिक पोषण होता है।

*एमएससी स्कॉलर; **,**सहायक प्राध्यापक, डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, बिहार

माइक्रोग्रीन्स से युक्त व्यंजन

हम विभिन्न प्रकार के व्यंजनों में जैसे कि सलाद, पास्ता, डोसा, अंडा रोल, बर्गर, पिज्जा, पोहा और विभिन्न प्रकार की सब्जियों में माइक्रोग्रीन्स का स्वाद के साथ-साथ सुंदरता बढ़ाने के लिए उपयोग करते हैं। इनमें से अधिकांश मीठे, पौष्टिक, खट्टे, कड़वे और मसालेदार होते हैं। ये अधिकतर लाल, बैंगनी और हरे रंग के होते हैं।

माइक्रोग्रीन्स के फायदे

माइक्रोग्रीन्स विटामिन ए, बीटा कैरोटीन, विटामिन सी, विटामिन ई, विटामिन के, एंटीऑक्सीडेंट और ल्यूटिन से भरपूर होते हैं। ये कैंसर, डायबिटीज, क्रॉनिक, हृदय रोग आदि से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

पौष्टिकता: माइक्रोग्रीन अपने छोटे आकार के बावजूद अधिक पोषण सामग्री जैसे कि विटामिन, मिनरल्स और फाइटोन्यूट्रिएंट्स प्रदान करते हैं।

विटामिन और मिनरल्स: माइक्रोग्रीन्स विभिन्न विटामिन और मिनरल्स का अच्छा स्रोत होते हैं, जैसे कि विटामिन सी, विटामिन ए, विटामिन के, पोटेशियम और आयरन आदि।

एंटीऑक्सीडेंट्स: माइक्रोग्रीन्स में अधिक मात्रा में एंटीऑक्सीडेंट्स होते हैं जो शरीर को रोगों से बचाने में मदद करते हैं।

इम्यून सिस्टम को मजबूती: माइक्रोग्रीन्स में पाए जाने वाले पौष्टिक तत्व शरीर के इम्यून सिस्टम को स्थायी बनाने और मजबूत करने में मदद करते हैं।

पाचन तंत्र: माइक्रोग्रीन्स में पाए जाने वाले फाइबर और अन्य पौष्टिक तत्व पाचन प्रक्रिया को मजबूत बनाने में सहायक होते हैं और डाइजेस्टिव स्वास्थ्य को सुधारते हैं।

सारणी: माइक्रोग्रीन्स उगाने के लिए उचित फसलें

फसल	कुल	फसल	कुल
पालक	*ऐमारैंथसी*	डील	*अपियासी*
चौलाई	*ऐमारैंथसी*	अजवाइन	*अपियासी*
मेथी	*फेबेसी*	सौंफ	*अपियासी*
चुकंदर	*ऐमारैंथसी*	लहसुन	*अमेरीलिडेसी*
पत्तागोभी	*क्रूसीफेरी*	प्याज	*अमेरीलिडेसी*
ब्रोकोली	*क्रूसीफेरी*	लीक	*अमेरीलिडेसी*
मूली	*क्रूसीफेरी*	तरबूज	*कुकुर्बिटेसी*
फूलगोभी	*क्रूसीफेरी*	खीरा	*कुकुर्बिटेसी*
गाजर	*अपियासी*	खरबूज	*कुकुर्बिटेसी*
धनिया	*अपियासी*	अरुगुला	*क्रूसीफेरी*

घर पर माइक्रोग्रीन्स उगाने के लिए आवश्यक सामग्री

बीज, मिट्टी, प्लास्टिक ट्रे या मिट्टी का पात्र, सूक्ष्म बॉटल स्प्रेयर, कैंची, प्रकाश के लिए उचित स्थान।

बीज: माइक्रोग्रीन्स उगाने के लिए ऑर्गेनिक बीजों का चयन करें। ये कीटों और रोगों से मुक्त हो अन्यथा कीट तथा रोगग्रस्त बीज के उपयोग से माइक्रोग्रीन्स की गुणवत्ता खराब हो जाती है।

उगाने के लिए पात्र: बीज बोने के लिए किसी विशेष पात्र की आवश्यकता नहीं होती है। किसी मिट्टी के घड़े, प्लास्टिक ट्रे, बॉटल, बाल्टी का उपयोग कर सकते हैं।

मिट्टी/जल: इसके लिए खेत की मिट्टी एवं जैविक खाद के मिश्रण का उपयोग कर सकते हैं। बहुत से लोग इसे उगाने के लिए केवल जल का उपयोग करते हैं।

प्रकाश की आवश्यकता: माइक्रोग्रीन्स के अच्छे अंकुरण के लिए इसे दिन में कम से कम 3-4 घण्टे प्रकाश की आवश्यकता होती है। इसके लिए आप खिड़की या बालकनी के पास रख सकते हैं।

देखभाल

माइक्रोग्रीन्स में सबसे सामान्य समस्या कवकजनित रोग है। यह अत्यधिक जल के उपयोग के कारण फैलता है। इस समस्या के समाधान के लिए माइक्रोग्रीन्स में आवश्यकता के अनुसार पानी देना चाहिए। माइक्रोग्रीन्स को काटने के बाद उसे धोने से उसकी निधानी

पोषण से समृद्ध माइक्रोग्रीन्स

घर पर उगाएं माइक्रोग्रीन्स

- कठोर बीज हो तो उसे जल में 24 घंटे के लिए भिगोकर, 12 घंटे के बाद जल को परिवर्तित करें।
- बीजों/अंकुरित बीजों को प्लास्टिक ट्रे या मिट्टी के पात्र में बोएं।
- बोने के बाद ऊपर मिट्टी चढ़ाएं।
- मिट्टी चढ़ाने के बाद स्प्रेयर की सहायता से जल का छिड़काव करें।
- पात्र को रोज दिन में 3-4 घंटे प्रकाश में रखें और उसमें नमी बनाए रखें।
- माइक्रोग्रीन्स 10-15 दिनों के बाद कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं।
- कटाई के लिए जीवाणुरहित कैंची या चाकू का उपयोग करके इसके तने को सावधानीपूर्वक काटें और इसे पौष्टिक आहार के रूप में उपयोग करें।

सेवन के लिए तैयार माइक्रोग्रीन्स

आयु कम होती है, इसलिए उसे आवश्यकता के अनुसार ही काटना चाहिए।

माइक्रोग्रीन्स की ऊर्ध्वाधर खेती

इसकी बड़े पैमाने पर ऊर्ध्वाधर खेती का प्रचलन बढ़ रहा है। यह किसानों को सुगमता और लाभकारी प्रक्रिया प्रदान कर सकती है। यह खेती उपयुक्त प्रौद्योगिकी का सही उपयोग करने के साथ-साथ, उच्च उत्पादन और आर्थिक समृद्धि की संभावना प्रदान कर सकती है। इससे आय में वृद्धि हो सकती है। विशेषकर आजकल की जलवायु परिवर्तन की स्थिति में, ऊर्ध्वाधर खेती नए और आधुनिक समाधानों की आवश्यकता को उजागर कर रही है।

यह खेती टिकाऊ संसाधनों का उपयोग करने के साथ-साथ, पानी और उर्वरकों का सही उपयोग करके पौधों के विकास के लिए अनुकूलतम परिस्थितियाँ बनाने में मदद कर सकती है। इससे न केवल उत्पादन में वृद्धि होगी, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों की बचत और पर्यावरण सुरक्षा में भी सहायता मिलेगी।

ऊर्ध्वाधर खेती के माध्यम से कम जगह पर अधिक उत्पादन करने की क्षमता है। इससे कृषकों को अधिक मुनाफा हो सकता है। इससे कृषि क्षेत्र को आर्थिक सुरक्षा और समृद्धि की दिशा में एक नई दिशा मिल सकती है।

व्यावसायिक स्तर पर माइक्रोग्रीन्स का उत्पादन

संभावनाएं

माइक्रोग्रीन्स की खेती आने वाले समय में भारतीय कृषि के लिए एक महत्वपूर्ण संभावना है। ये छोटे स्थानों में भी बड़ी मात्रा में उत्पादित की जा सकती हैं और स्थानीय बाजारों में बेची जा सकती हैं। यह किसानों के लिए भी एक अच्छा उद्यम साबित हो सकता है और कम खर्च में अधिक मुनाफा कमाने का बेहतर अवसर प्रदान करता है। इसकी खेती के लिए माइक्रोग्रीन्स इकाई का शहरों के पास स्थित होना आवश्यक है क्योंकि शहरों में इसकी अधिक मांग है बजाय गाँवों के। इस तरह, किसान मुख्य खेती के साथ माइक्रोग्रीन्स की खेती से अपनी आय दोगुना कर सकते हैं।

दिखने में छोटे पर पोषक तत्वों से भरपूर होने के कारण ये वानस्पतिक पौधे आहार सुरक्षा और पोषण के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इन्हें उगाने और खाने का तरीका न केवल पोषण से भरपूर है, बल्कि यह आधुनिक कृषि में भी महत्वपूर्ण विकल्प बन चुका है। इसके साथ ही, माइक्रोग्रीन्स की खेती से उन किसानों की आय भी बढ़ सकती है, जो कृषि उत्पादों में नए लाभकारी स्रोतों की तलाश में हैं। ■

सब्जी उत्पादन में पलवार तकनीक

भूपेन्द्र सिंह*, **मनीष कुमार****, **रूपेश रंजन****, **चंचिला कुमारी*****
और **शिव मंगल प्रसाद******

बढ़ती जनसंख्या के कारण दिन-प्रतिदिन फल सब्जियों की मांग बढ़ती जा रही है। इसके कारण प्रति हैक्टर क्षेत्रफल से उत्पादन बढ़ाना किसानों की प्रथम आवश्यकता हो गई है। इसी वजह से किसानों का भी बैमौसमी सब्जियों की तरफ रुझान बढ़ रहा है। सब्जियों की खेती में पलवार का प्रयोग तापक्रम को नियंत्रित करने, जमीन की सतह से पानी को उड़ने से बचाने, पानी का वाष्पोत्सर्जन कम करने, खरपतवार नियंत्रण करने के लिए तथा फसल को कीटों-मकोड़ों से बचाव के लिए किया जाता है।

प्लास्टिक पलवार में विभिन्न रंग और मोटाई की प्लास्टिक का प्रयोग पलवार के रूप में किया जाता है। साधारणतः प्लास्टिक की मोटाई को माइक्रॉन में नापा जाता है। फसल की वानस्पतिक अवधि के आधार पर प्लास्टिक की मोटाई भी बदलती रहती है जैसे 3 से 4 महीनों की अवस्था वाली फसल के लिए 25 माइक्रॉन तथा 4 से 12 महीनों की अवधि की फसल के लिए 50 माइक्रॉन मोटाई की प्लास्टिक की जरूरत होती है।

फल वाली फसल के लिए 100 से 200 माइक्रॉन की आवश्यकता होती है। फल एवं सब्जियों की खेती में दो प्रकार की पलवार का प्रयोग किया जाता है पहली प्लास्टिक पलवार और दूसरी धान या गेहूं की पुआल की पलवार।

---

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (बागवानी); **तकनीकी अधिकारी; ***विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान), कृषि विज्ञान केंद्र (रा.चा अनु.स.) कोडरमा, झारखण्ड; ****प्रधान वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान), सी.आर.यू.आर.आर.एस (रा.चा अनु.स.) हजारीबाग

प्लास्टिक पलवार के प्रकार

- काले रंग की प्लास्टिक पलवार
- पीले रंग की प्लास्टिक पलवार
- पारदर्शी प्लास्टिक पलवार
- सिल्वर रंग की प्लास्टिक पलवार
- जैव विविधीकृत प्लास्टिक पलवार

काले रंग की प्लास्टिक पलवार

काले रंग की प्लास्टिक पलवार का अधिकांश प्रयोग खरपतवार नियंत्रण के लिए किया जाता है।

पीले रंग की प्लास्टिक पलवार

पीले रंग की पलवार कीटों को अपनी ओर आकर्षित करती है। इसके बाद कीटों को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है।

पारदर्शी प्लास्टिक पलवार

पारदर्शी होने के कारण यह पलवार सूर्य की किरणों के लिए अधिक पारगम्य है। इसके फलस्वरूप यह भूमि के तापमान में अधिक वृद्धि करती है। अन्य रंगों की प्लास्टिक के मुकाबले इस रंग की प्लास्टिक में वानस्पतिक वृद्धि बेहतर होती है। इसके कारण अधिक उपज प्राप्त होती है और यह पारदर्शी प्लास्टिक भूमि शोधन के रूप में भी प्रयोग की जाती है।

पलवार तकनीकी के लाभ

- असंचित क्षेत्रों में नमी संरक्षण करना।
- सिंचित क्षेत्रों में सिंचाई की पुनरावृति कम करना।
- भूमि का तापक्रम नियंत्रण में रखना।
- खरपतवार नियंत्रण करना।
- भूजनित रोगों का नियंत्रण।
- मृदा संरचना को बनाए रखना।
- फसल के उत्पादन में वृद्धि करना।
- उच्च गुणवत्तायुक्त उत्पाद तैयार करना।
- उर्वरकों एवं पोषक तत्वों का अधिकतम उपयोग करना।
- सब्जी एवं फलों को भूजनित रोग। व्याधि से बचाना।

सिल्वर रंग की प्लास्टिक पलवार

सिल्वर रंग की पलवार भूमि में तापमान में वृद्धि को कम करती है। इसके साथ रोग फैलाने वाले कीटों के नियंत्रण का काम करती है।

जैव विविधीकृत प्लास्टिक पलवार

यह प्लास्टिक पलवार सूर्य और जीवाणुओं द्वारा विघटित हो जाती है। इसके कारण पर्यावरण समस्या नहीं रहती। फसल लेने के बाद पलवार को उठाने में आने वाले खर्च में बचत होती है।

पलवार बिछाने की विधि

सही योजना और सावधानीपूर्वक कार्य करने से ही पलवार की प्रभावशीलता बढ़ती है और रखरखाव में कमी आती है। पलवार बिछाने से पूर्व सभी कृषि क्रियाएं एवं भूमि समतलीकरण आदि कार्य कर लेने चाहिए। पलवार को बिछाने के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि हवा या वर्षा नहीं हो रही हो, प्लास्टिक कहीं से मुड़ी हुई न हो। उसे इतना खींचकर बिछाया जाए कि वह न तो बहुत ज्यादा तनी हो और ना ही बहुत ढीली हो। तनी हुई प्लास्टिक के जल्दी फटने तथा ढीली प्लास्टिक के तेज हवा में उखड़ने की आशंका ज्यादा होती है। पलवार के दोनों तरफ मिट्टी डालकर प्लास्टिक को अच्छी तरह दबा देना चाहिए। प्लास्टिक पलवार को कभी भी तेज धूप में नहीं लगाना चाहिए। यदि जमाव से पहले पलवार का प्रयोग करना है तो फसल के अनुसार उचित दूरी पर छेद कर लेने चाहिए। ■

पॉलीहाउस में खीरे की खेती

मुकेश कुमार यादव*, गौरव कुमार यादव*, मलखान सिंह गुर्जर* और **मनोज कुमार यादव****

खीरा एक लोकप्रिय एवं कुकुर्बिटेसी परिवार की महत्वपूर्ण सब्जीवर्गीय फसल है। खीरे को इसके कोमल फलों के लिए उगाया जाता है। इसे या तो सलाद के रूप में कच्चा खाया जाता है अथवा सब्जी के रूप में पकाया जाता है या अपरिपक्व अवस्था में अचार बनाया जाता है। खीरा अपच, कब्ज और पीलिया से लोगों के लिए फायदेमंद होता है। इसमें पानी की मात्रा बहुत अधिक (95.5%) होती है, जो ग्रीष्म ऋतु में पानी की कमी पूरी करती है। भारत में खीरे की फसल का 1,17,000 हैक्टर क्षेत्रफल एवं वार्षिक उत्पादन 1651.93 टन (राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, 2020-2021) है। वर्तमान में पॉलीहाउस में खीरे की खेती एक बहुत ही उपयोगी तकनीकी है, यह तकनीक खीरे की फसल को विपरीत जलवायु की परिस्थितियों (ओलावृष्टि, तेज हवाओं), कीटों और रोगों से बचाती है। इससे पर्याप्त पोषक तत्त्व पौधों को प्राप्त होते हैं।

खीरे की संरक्षित खेती खुली खेती की तुलना में कम समय में अधिक उत्पादकता और बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित करती है।

मिट्टी और जलवायु: अच्छी जल निकासयुक्त उच्च कार्बनिक पदार्थ वाली रेतीली दोमट मिट्टी, जिसकी विद्युत चालकता 2 डेसी/ मी. से कम और पी एच मान 6.5-7.5 हो, खीरे की खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है। खीरे की फसल पॉलीहाउस में पर्याप्त प्रकाश, उच्च आर्द्रता, उच्च मिट्टी की नमी, तापमान और पर्याप्त उर्वरकों की उपलब्धता में सफलतापूर्वक बढ़ती है।

*पादप रोग विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012; **भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, करनाल, हरियाणा-132001

खेत की तैयारी: पॉलीहाउस में सबसे पहले हल्की सिंचाई करके 20-25 टन अच्छी तरह सड़ी-गली गोबर की खाद डालते हैं। इसके पश्चात् डिस्क हैरो द्वारा गहरी जुताई करके खेत को अच्छी तरह सुखाया जाता है। तथा एक बार रोटावेटर चलाकर मिट्टी को भुरभुरा बनाया जाता है।

मृदा का सौर तापीकरण: खेत में पाटा

सौर तापीकरण

सूत्रकृमि की रोकथाम

जड़गांठ सूत्रकृमि जड़ों को संक्रमित करते हैं और जड़ों के अंदर गांठ बनाते हैं। इन्हें विशाल कोशिकाएं भी कहा जाता है। इसके प्रभाव से पौधों में पानी और पोषक तत्वों का प्रवाह कम हो जाता है परिणामस्वरूप, पौधे की वृद्धि और उपज कम हो जाती है। जड़गांठ सूत्रकृमि की रोकथाम के लिए क्यारियों में कार्बोफ्यूरॉन ग्रैन्यूल (फुराडान 3 जी @5-10 ग्राम/ मीटर^2) डालें तथा मृदा सौरीकरण भी सूत्रकृमि नियंत्रण में सहायक है।

चलाकर मिट्टी को समतल करने के बाद 25 माइक्रॉन की मोटी पारदर्शी पॉलीथिन शीटों से पूरे पॉलीहाउस के अंदर की मिट्टी को अच्छी तरह ढककर एवं चारों ओर से मिट्टी द्वारा अच्छी तरह दबाकर वायु अवरुद्ध स्थिति बनाई जाती है। गर्मी के महीनों (अप्रैल-मई) में एक से डेढ़ महीने (30-45 दिनों) तक ढककर रखते हैं। बीच-बीच में शीट के नीचे टपक सिंचाई विधि द्वारा पानी दिया जाता है, इससे मिट्टी का तापमान 55-60 डिग्री सेल्सियस तक पहुँच जाता है जो खीरे की फसल में खरपतवारों, हानिकारक कवकों, जीवाणु एवं जड़गांठ सूत्रकृमि आदि के नियंत्रण में लाभदायक सिद्ध होता है।

क्यारी तैयार करना: बेड मेकर मशीन से 2 फीट की चौड़ाई की क्यारियां तैयार की जाती हैं। एक 4000 वर्ग मीटर के पॉलीहाउस में लगभग 42 क्यारियां बनायी जाती हैं। क्यारी बनाते समय ही इसमें डी.ए.पी. 40 कि.ग्रा., पोटाश 20 कि.ग्रा. एवं सागरिका 20 कि.ग्रा. (समुद्री शैवाल का अर्क, जैव उर्वरक) तथा सूक्ष्म पोषक तत्व 20 कि.ग्रा. डालते हैं। क्यारियों के ऊपर ड्रिप सिंचाई की युग्मीय पाइप लाइन बिछाई जाती है, तत्पश्चात पॉलीथिन मल्च बिछाई जाती है। उचित दूरी पर बीज बोने के लिए छिद्र किये जाते हैं, पॉलीथिन मल्च से खरपतवार नियंत्रण और जल उपयोग दक्षता बढ़ती है।

उपयुक्त प्रजातियां: निम्न किस्मों को पॉलीहाउस में सफलतापूर्वक उगाया जाता है:

गर्मियों में: केप्टा (सिंजेंटा), ग्रीन ग्लोरी (सीमेंस), कैप्टनस्टार (रिजवान), एम स्टार (रिजवान)

सर्दियों में: किंगस्टार (रिजवान), पी-64 (बायर)

बुआई का समय एवं दूरी: गर्मियों में जून-जुलाई माह और सर्दियों में अक्टूबर-

पॉलीथिन मल्च

नवम्बर माह में बीजों को रिडोमिल गोल्ड (4% मेटलैक्सिल-एम 64% डब्ल्यूपी मैंकोजेब) फफूंदनाशक मिलाकर लगाया जाता है। क्यारियों में बीज लगाने के बाद पानी चलाकर अच्छी तरह क्यारियों को गीला कर दिया जाता है। बीजों का अंकुरण 3-4 दिनों में गर्मी के समय में तथा 7-8 दिनों में सर्दी के समय में हो जाता है। क्यारी रोपण में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 3.5 फीट तथा पौधे से पौधे की दूरी 2 फीट रखी जाती है और एक 2000 वर्ग मीटर के पॉलीहाउस में लगभग 3600-3750 बीज लगते हैं। इनकी प्रति बीज कीमत 5-8 रुपये तक आती है।

प्रशिक्षण और छंटाई: बीज लगाने के 8-10 दिनों के बाद शुरुआती समय में जैसे-जैसे पौधे बढ़वार लेते हैं, इसी के साथ ऊपर तारों से एवं नीचे ड्रिप लाइन की पाइप से धागे बांधते हैं। पौधों को इन्हीं धागों के सहारे ऊपर चढ़ाते रहते हैं। पौधे के मुख्य तने के साथ-साथ जो दूसरी शाखाएं आती हैं, उनको तोड़ते रहते हैं। केवल ऊपर की ओर बढ़ रही 2-3 शाखाएं छोड़ते हैं,जिससे कि खीरे का फल सही आकार लेता है और अच्छा उत्पादन प्राप्त होता है।

सिंचाई: खीरे की फसल में प्रतिदिन ड्रिप सिंचाई प्रणाली द्वारा 25-30 मिनट तक पानी दिया जाता है, लेकिन फसल की आवश्यकता और मौसम की स्थिति के आधार पर इसमें बदलाव किया जा सकता है।

उर्वरक प्रबंधन एवं उर्वरता: शुरुआती समय में पौधों की अच्छी बढ़वार के लिए एनपीके दो किलोग्राम /4000 वर्ग मीटर तथा 19:19:19 (एनपीके) दो किलोग्राम /4000 वर्ग मीटर पानी में घुलनशील टपक सिंचाई द्वारा दिया जाता है तथा रोपाई के 18-20 दिनों के बाद कैल्शियम दो किलोग्राम+बोरॉन 100 ग्राम दिया जाता है।

प्रशिक्षण और छंटाई

प्रमुख रोगों का नियंत्रण

खीरे की फसल में शुरुआत के 15-20 दिनों में जड़ों की गलन एवं उकठा रोग तथा बाद में मृदुरोमिल आसिता/झुलसा रोग प्राय: दिखाई देते हैं। जड़गलन एवं उकठा रोग की रोकथाम के लिए एलियट फफूंदीनाशक को एक लीटर पानी में 1-1.25 ग्राम मात्रा लेकर ड्रेंचिंग करें। इसके बाद ट्राइकोडर्मा 2 किलो + स्यूडोमोनास 2 किलो बायो फफूंदीनाशक को 24-48 घंटे तक गुड़ व बेसन में मिलाकर रखें, फिर बने हुए घोल में माइकोराइजा 200 ग्राम पाउडर (रेलीगोल्ड) को 400 लीटर पानी में मिलाकर ड्रेंचिंग करें तथा मृदुरोमिल आसिता /झुलसा रोग के नियंत्रण के लिए 10-15 दिनों के अंतराल पर रिडोमिल एम जेड (2.5 ग्राम/लीटर पानी) के दो स्प्रे करें। इसके बाद हेक्साकैनाजोल (2.5 ग्राम/लीटर पानी) या ब्लिटॉक्स-50 (3 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करें। बोर्डो मिश्रण (कॉपर सल्फेट 800 ग्राम + चूना 800 ग्राम + 100 लीटर पानी) का एक स्प्रे करें।

बूँद-बूँद सिंचाई

जल घुलनशील उर्वरक ड्रिप फर्टिगेशन के माध्यम से पौधों को सप्ताह में तीन बार (एक दिन छोड़ कर एक दिन) फर्टिगेशन दिया जाता है। पॉलीहाउस में फर्टिगेशन 30 दिन के बाद शुरू किया जाता है जो इस प्रकार है:

प्रथम दिन-19:19:19 (एनपीके)=एक किलोग्राम+0:52:34 (एनपीके)=एक किलोग्राम+सूक्ष्म तत्व (फेरस सल्फेट=100 ग्राम +मैंग्नीज=100 ग्राम +जिंक सल्फेट=100 ग्राम), दूसरा दिन -कैल्शियम नाइट्रेट= तीन किलोग्राम+13:0:45 (एनपीके)=दो किलोग्राम+बोरॉन 100 ग्राम, तीसरा दिन- मैग्नीशियम सल्फेट तीन किलोग्राम+0:0:50 (एनपीके)=1.5 किलोग्राम उपरोक्त सभी को पानी में घोलकर टपक सिंचाई विधि से पॉलीहाउस में पानी के साथ उर्वरक पौधों को दिया जाता है।

कीटों एवं रोगों का प्रबंधन: खीरे में मुख्य रूप से एफिड, थ्रिप्स और सफेद मक्खी आदि कीट लगते हैं एवं साथ ही साथ खीरे की फसल पर कई कवक, जीवाणु, विषाणु एवं सूत्रकृमि द्वारा आक्रमण किया जाता है। सफेद मक्खी (जो खीरा मोजेक विषाणु रोग का वाहक है) की रोकथाम के लिए 10-15 दिनों के अंतराल पर डायनोटफ्यूरॉन 20% एस जी 100 ग्राम/एकड़ (टोकन) या पायरीफ्लुक्विनाजोन 20% डब्ल्यू जी 200 ग्राम/एकड़ दो स्प्रे करें तथा खेत में येलो स्टिकी ट्रैप भी लगाएं। थ्रिप्स की रोकथाम के लिए फिप्रोनिल 5% या फिप्रोनिल 40%+ इमिडाक्लोरपिड 40 डब्ल्यूजी 40 ग्राम/एकड़ 10-15 दिनों के अंतराल पर दो स्प्रे करें।

कीट नियंत्रण

फसल की तुड़ाई: ग्रीष्म ऋतु में खीरे की तुड़ाई 35 दिनों तथा सर्दी में 45 दिनों के बाद शुरू होती है। खीरे के फलों की तुड़ाई एक दिन छोड़कर की जाती है। शुरू के एक महीने तक उत्पादन अधिक होता है। एक महीने के बाद धीरे-धीरे उत्पादन कम होता जाता है तथा तुड़ाई का काम खीरे की फसल की 120 दिनों की अवधि तक किया जाता है।

उत्पादन: लगभग 50-60 मीट्रिक टन का उत्पादन 4000 वर्ग मीटर के पॉलीहाउस से प्राप्त होता है।

इसका औसतन बाजार मूल्य 20 रुपये प्रति किलोग्राम प्राप्त होता है तो लगभग 50,000×20 =10,00,000 (दस लाख) रुपये संरक्षित खीरे की खेती से प्राप्त होता है। इसमें से 50% (25% खेत की तैयारी+25% खाद, बीज, उर्वरक तथा कीटनाशक, कवकनाशी आदि) कम करने के बाद भी लगभग 50% शुद्ध लाभ प्राप्त होता है। यह बहुत ही लाभकारी खेती साबित हो रही है। ■

लो टनल तकनीक से सब्जी उत्पादन

बी. आर. चौधरी* और **एस. के. माहेश्वरी***

गर्म शुष्क क्षेत्र देश के लगभग 31.7 मिलियन क्षेत्रफल में फैला हुआ है। इसका सबसे ज्यादा फैलाव पश्चिमी राजस्थान (19.62 मिलियन हैक्टर) में है। राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में तापमान दिसम्बर-जनवरी में कभी-कभी 0° सेल्सियस व मई-जून में 48° सेल्सियस तक रहता है। यहां के थार रेगिस्तान में कद्दूवर्गीय सब्जियों की लो टनल तकनीक से अगेती फसल/बेमौसमी उत्पादन से अधिक लाभ मिलता है। यह तकनीक कम लागत की होने के कारण किसानों में काफी लोकप्रिय है। बीकानेर जिले में इस तकनीक से लगभग 2000 हैक्टर क्षेत्रफल में कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती की जाती है।

लो टनल तकनीक एक छोटे प्रकार की कम ऊंचाई वाली गुफानुमा संरक्षित संरचना है। इसे बीज की बुआई के बाद प्रत्येक पंक्ति के ऊपर कम ऊंचाई पर प्लास्टिक की चादर से ढककर बनाया जाता है। इसका निर्माण कम लागत में आसानी से किया जा सकता है। प्लास्टिक की चादर से ढकने के कारण टनल का तापमान बाहर की तुलना में ज्यादा होता है। टनल का निर्माण लोहे के सरिये/बांस तथा पॉलीथिन की शीट से किया जाता है। टनल की मदद से पौधे सर्दियों में कम तापमान व पाले से बच जाते हैं तथा टनल के अंदर का तापमान बाहरी तापमान से 6-8 सेल्सियस अधिक होने के कारण पौधों की वानस्पतिक वृद्धि होती रहती है। यह तकनीक सब्जियों की बेमौसमी खेती के लिए बहुत उपयोगी है।

इस तकनीक से कद्दूवर्गीय सब्जियों (ककड़ी, टिंडा, चप्पन कद्दू, खरबूजा, तरबूज, लौकी, तोरई, टिंडा, काचरी, फूट ककड़ी आदि) की अगेती/बेमौसमी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। बीज को प्लास्टिक प्रो-ट्रे में दिसंबर-जनवरी माह में उगाकर अगेती व रोगरहित पौध भी तैयार कर सकते हैं।

*भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान)-334006

कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती

दिसंबर माह में खेत में फसल के अनुसार 2.0 मीटर की दूरी पर 45 सें.मी. चौड़ी तथा 45-60 सें.मी. गहरी नालियां पूर्व से पश्चिम दिशा में बनाते हैं। इन नालियों में सड़ी-गली गोबर की खाद (150 क्विं/हैक्टर) तथा नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश क्रमश: 20, 60 व 60 कि.ग्रा./हैक्टर डालनी चाहिए। बुआई के 20 एवं 40 दिनों बाद नाइट्रोजन की 20-20 कि.ग्रा. मात्रा को टॉप ड्रेसिंग के रूप में जड़ के पास देना चाहिए। पानी में घुलनशील 19:19:19 एनपीके 10-15 कि.ग्रा./हैक्टर को फसल की वानस्पतिक बढ़वार

बुआई के बाद लो टनल

भरपूर उत्पादन हेतु कैसे करें पर-परागण की उचित व्यवस्था

सभी कद्दूवर्गीय सब्जियां पर-परागित होने के कारण इनमें परगण की क्रिया मधुमक्खियों से सम्पादित होती है। गरम शुष्क क्षेत्रों में अप्रैल-मई में तापमान 40 डिग्री सेल्सियस से अधिक होने के कारण मधुमक्खियों का भ्रमण कम हो जाता है। इससे फल कम बनते हैं। अत: उचित परागण के लिए खेत में प्रति एकड़ 1-2 मधुमक्खी के छत्ते रखने चाहिए। कीटनाशकों का छिड़काव मधुमक्खियों के खेत में भ्रमण के समय नहीं करना चाहिए।

के समय ड्रिप द्वारा सिंचाई के साथ देनी चाहिए। सिंचाई के लिए 4 लीटर/ घण्टा पानी डिस्चार्ज वाले ड्रिपर की 16 मि.मी. आकार की ड्रिप पाइप (लैटरल) जिन पर 60 सें. मी. की दूरी पर इनलाइन ड्रिपर लगे हों, को नालियों में बिछा देनी चाहिए।

बुआई हेतु ड्रिप लगी हुई तैयार नालियां

दिसंबर-जनवरी माह में बुआई करने से पूर्व बीज अंकुरण के लिए बीजों को पानी में भिगोना चाहिए। पानी में भिगोने की अवधि बीजों के छिलके की मोटाई पर निर्भर करती है। यह 3-4 घण्टा (खरबूजा, खीरा, ककड़ी), 6-8 घण्टा (लौकी, तोरई) तथा 10-12 घण्टा (टिंडा, तरबूज) रखनी चाहिए। भिगोने के बाद बीजों को कैप्टॉन या थीरम (2 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए। इसके बाद उन्हें बोरे के टुकड़े में लपेटकर किसी गर्म स्थान जैसे बिना सड़ी हुई गोबर की खाद या भूसे में 1-2 दिनों तक दबाने से बीजों का अंकुरण शीघ्र हो जाता है। इन अंकुरित बीजों की बुआई तैयार नालियों में दिसंबर के अंतिम सप्ताह से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक कर देनी चाहिए। एक ड्रिपर के पास कम से कम 2 बीजों की बुआई करते हैं। नाली (ट्रेंच) के ऊपर अर्ध चंद्राकर जंगरोधी लोहे के तारों (2 मि.मी. मोटाई) को 3-4 मीटर की दूरी पर स्थापित करते हैं। इन तारों पर 30-50 माइक्रॉन मोटी तथा 2 मीटर चौड़ी पारदर्शी प्लास्टिक की चादर बिछाकर इसकी लंबाई

चूर्णिल आसिता रोग

मोजैक का प्रकोप

बड नेक्रोसिस से प्रभावित पौधे

वाले दोनों सिरों को मिट्टी से दबा दिया जाता है। इस प्रकार बोई गई फसल पर प्लास्टिक की एक लघु सुरंग बन जाती है। समय-समय पर प्लास्टिक को हटाकर फसल का निरीक्षण करते रहना चाहिए।

फसल को उच्च तापमान से कैसे बचाएं

वानस्पतिक वृद्धि के दौरान पंक्तियों के बीच सरकंडा बिछा देना चाहिए। इससे पौधों का गर्म मिट्टी से बचाव होने के कारण

सरकंडा बिछाने के बाद लहलहाती फसल

बढ़वार अच्छी होती है। सरकंडा बिछाने से पौधे उचित तरीके से फैलते हैं।

सारणी: पौध में लगने वाले कीटों का नियंत्रण

कीट	कीटनाशक का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव
फलमक्खी, कद्दू का लाल कीट, पत्ती भेदक सूँडी, हाडा बीटल	डाइमेथोएट 30 ईसी या मैलाथियान 50 ईसी (1.5-2.0 मिली) अथवा स्पाइनोसेड 45 एससी (0.5-0.7 मिली)
चेंपा, सफेद मक्खी, लीफ माइनर	इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल या थायोमिथोक्जाम 70 डब्ल्यू एस (0.3-0.5 मिली.)

सारणी: पौध में लगने वाले रोगों का नियंत्रण

रोग	नियंत्रण
चूर्णिल आसिता	डिनोकेप 48 प्रतिशत ई.सी (1 मिली/लीटर पानी) का छिड़काव करें
मृदुरोमिल आसिता	मैंकोजेब (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें
अल्टरनेरिया पत्ती झुलसा	मैंकोजेब (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) या हेक्जाकोनाजोल (0.5 मिलीलीटर पानी) का छिड़काव करें
उकठा रोग	फसल में बाविस्टीन की 2 ग्राम मात्रा का प्रति लीटर पानी की दर से ड्रेंचिंग करें
मोजैक रोग व कलिका परिगलन	माहूं का प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल का 0.3-0.5 मिलीलीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

पौध संरक्षण उपाय

क्यू-आकर्षण ट्रैप फल मक्खी के प्रबंधन में प्रभावी है। खड़ी फसल में कीटनाशकों का छिड़काव फलों की तुड़ाई के बाद करना चाहिए। ■

लाभ से भरपूर यह तकनीक

इस तकनीक से बोई गई ककड़ी, लौकी, तोरई, खीरा, चप्पन कद्दू आदि की तुड़ाई मार्च माह के प्रथम सप्ताह से शुरू हो जाती है। तरबूज व खरबूजा की तुड़ाई मार्च माह के अंत से प्रारंभ हो जाती है। इस तकनीक से कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती करने से उत्पादन सामान्य दशा में बोई गई फसल से 40-50 दिनों अगेती, अधिक तथा उच्च गुणवत्तायुक्त प्राप्त होता है। इससे इनका बाजार भाव भी अधिक मिलता है। इस तकनीक से कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती करने से लाभ:लागत अनुपात 1:2.05 से 1:3.35 तक प्राप्त किया जा सकता है।

तरबूज (280-300 क्विं/है.)

लौकी (300-350 क्विं/है.)

पौधों का कठोरीकरण

फरवरी के दूसरे या तीसरे सप्ताह में जब मौसम का तापमान बढ़ जाता है तो प्लास्टिक की टनल को हटाकर खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। इस समय तक कद्दूवर्गीय सब्जियों में फूल आना भी प्रारंभ हो जाते हैं। प्लास्टिक की टनल को कभी भी एकदम से नहीं हटाना चाहिए। ऐसा करने से पौधों को धक्का लगता है। पहले टनल के दोनों छोर से प्लास्टिक को हटा देना चाहिए। इसके 2-3 दिनों बाद प्लास्टिक को दिन में हटा देना चाहिए तथा शाम के समय पौधों को वापस प्लास्टिक से ढक देना चाहिए। यह प्रक्रिया 2-3 दिनों तक करने से पौधों का कठोरीकरण हो जाता है।

पौधों का कठोरीकरण

हाइड्रोपोनिक्स से चेरी टमाटर का उत्पादन

हरेन्द्र कुमार*, **देवी सहाय***, **अंकुर अग्रवाल***, **ओम प्रकाश*** और **बसंत बल्लभ***

पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों को साफ पानी में मिलाकर बनाये गये घोल में उगाने की तकनीकी को हाइड्रोपोनिक्स विधि कहते हैं। इस तकनीकी में मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती इसलिए इसे 'मृदारहित खेती' भी कहते हैं। वर्तमान समय में बढ़ती हुई जनसंख्या, पेड़-पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक प्राकृतिक पोषक तत्वों की कमी, भूमि निम्नीकरण, ग्लोबल वार्मिंग तथा लोगों का जैविक उत्पादन की ओर रुझान, इन सब चुनौतियों से निपटने के लिए हाइड्रोपोनिक्स खेती एक उभरती हुई नवाचार तकनीकी है। इसमें परम्परागत खेती की तुलना में अच्छा लाभ मिलता है। परम्परागत खेती में मृदाजनित व्याधि, जल दुर्लभता, अधिक श्रम गहन, कीटनाशक दवाइयों के अधिक इस्तेमाल से फसल गुणवत्ता प्रभावित होती है। इस संदर्भ में मृदारहित खेती की हाइड्रोपोनिक्स विधि एक अच्छा विकल्प है।

हाइड्रोपोनिक्स विधि से अधिक उत्पादकता व गुणवत्तायुक्त फसलों का उत्पादन होता है। फसल उत्पादन को एक स्तर तक स्थिर बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों के बढ़ते उपयोग ने मृदा की उर्वराशक्ति को भी प्रभावित किया है। इसके साथ ही घटती स्वच्छ एवं सिंचाई जल उपलब्धता, प्रदूषित जल का सिंचाई हेतु बढ़ता उपयोग और नए क्षेत्रों में कृषि की सम्भावनाओं को मूर्तरूप देने की कोशिश आदि कई कारण हैं जो कृषि की नई उन्नत तकनीकों पर शोध कार्यों को बढ़ावा दे रहे हैं। इन तकनीकों में मृदारहित खेती को सम्पूर्ण विश्व में प्रोत्साहित किया जा रहा है।

इस लेख का उद्धेश्य चेरी टमाटर की मृदारहित खेती (हाइड्रोपोनिक्स) के तहत गुणवत्ता का अवलोकन करना है।

*रक्षा जैव ऊर्जा अनुसंधान संस्थान, डीआरडीओ, गोरापड़ाव, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड-263139

सामग्री और विधियां

यह प्रयोग वर्ष 2021-22 के दौरान रक्षा जैव ऊर्जा अनुसंधान संस्थान, डीआरडीओ, हल्द्वानी में किया गया। इस दौरान उच्चतम एवं निम्नतम तापमान खुले खेत एवं नेट हाउस का क्रमशः 28-34° तथा 16-18° था। इसके लिए पीएच मान 6.5-7 एवं ईसी 1400-1500 निर्धारित किया गया। इस प्रयोग के दौरान एस्टेरीना सेरिना संकर किस्मों का चयन किया गया। इनमें करोटिनोयड व लाइकोपिन क्रमशः वर्णक की उपस्थिति की विशेषता पायी जाती है। इसमें 30 दिन पुरानी नर्सरी को एन.एफ.टी. (पोषक तत्व फिल्म तकनीक) तकनीक में स्थानांतरण किया गया। पौधों को उगाने के लिए प्लास्टिक ट्रे (45 सें.मी. × 30 सें.मी. तथा 10 सें.मी. गहरी)

बेल गुच्छों में लाल चेरी टमाटर (सेरिना प्रजाति), प्रति क्लस्टर में चेरी टमाटर

इस्तेमाल की गई तथा 4 पौधों पर ट्रे लगाए गये। पोषक घोल की ईसी तथा पीएच ज्ञात करने के लिए ईसी तथा पीएच मीटर (हेना, एम.सी.पी. क्रमशः) उपयोग में लिये गये।

किस्मों का चयन: एस्टेरीना हाइब्रिड (पीली चेरी टमाटर) करोटोनाइडयुक्त, सेरिना हाइब्रिड (लाल चेरी टमाटर) लाइकोपिन वर्णकयुक्त 65 दिन, 60-70 दिन क्रमशः इनकी फल परिपक्वता में लगते हैं।

पोषक तत्व

पौधे के उचित विकास के लिए 16 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इसमें से कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन तो पौधे वायुमंडल एवं जल से प्रकाश संश्लेषण क्रिया के दौरान प्राप्त करते हैं। अन्य प्राथमिक पोषक जिन्हें 'गौण पोषक तत्व' भी कहते हैं, ये नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर एवं द्वितीयक पोषक तत्व आयरन, मैंग्नीज, तांबा, जिंक, मॉलिब्डेनम, बोरॉन एवं क्लोरीन विकास में सहायता करते हैं। इस विधि में इन तत्वों के लवणों की उचित मात्रा को पानी में घोलकर संग्रह घोल मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की उचित मात्रा में तैयार किये गये हैं। इसकी 1 मि.ली. मात्रा प्रति ली. पानी प्रति सप्ताह पौधे की उचित बढ़वार और वृद्धि के लिए डाली गई थी।

हाइड्रोपोनिक्स तकनीक से उत्पादित चेरी टमाटर की बेल पर गुच्छों में फलन

कीट एवं रोगों का नियंत्रण

हाइड्रोपोनिक्स तकनीक में कीट एवं रोगों का नियंत्रण करने के लिए रासायनिक दवाइयों, कीटनाशकों का इस्तेमाल नहीं होता। ये अपशिष्ट विषाक्तता उत्पन्न करते हैं जो मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते हैं तथा कैंसर जैसे रोग बढ़ाते हैं। इस कारण हाइड्रोपोनिक्स तकनीकी में नीम के बीज की गिरी का अर्क विभिन्न प्रकार के पत्ते खाने वाले कीटों के लिए प्रभावी नियंत्रण करता है।

हाइड्रोपोनिक्स की आवश्यकता

- हाइड्रोपोनिक्स तकनीकी से पारंपरिक खेती की तुलना में पानी की बचत होती है।
- इस विधि से खेती करने से उत्पादकता प्रति इकाई कई गुना तक बढ़ जाती है क्योंकि यह सघन खेती को बढ़ावा देती है।
- हाइड्रोपोनिक्स तकनीकी, जैविक खेती के सिद्धांत को भी सफल बनाती है। इसमे स्वस्थ नर्सरी एवं रासायनिक तत्वों का न के बराबर उपयोग होता है।
- बढ़ती हुई जनसंख्या, ग्रामीण इलाकों में पोषण की कमी और शहरीकरण आदि जैसी सभी चुनौतियों ने गहन कृषि प्रणाली की ओर ध्यान आकर्षित किया है और नई कृषि तकनीकों का मार्ग प्रशस्त किया है इनमें हाइड्रोपोनिक्स एक उभरती हुई कृषि तकनीकी है।

टमाटर के गुच्छे

उपज

उपरोक्त परिणाम से पता चला है कि दोनों किस्में विभिन्न उपज देने वाले गुणों में भिन्न थीं। ऐस्टेरीना किस्म के पौधे लम्बे (380 सें.मी.) व अधिक फलों के गुच्छे / पौध (20.23) पर और फल का उत्पादन (4.80 कि.ग्रा.) सेरिना किस्म (3.94 कि. ग्रा.) से अधिक था। सेरिना किस्म के फलों का आकार और बीज कोष (पेरिकार्प) मोटाई में ऐस्टेरिना से अच्छा पाया गया। दोनों किस्में उत्पादन व गुणवत्ता मानकों के लिए महत्वपूर्ण पाई गई। ऐस्टेरिना किस्म में कुल फिनोल (380.66 मि.ग्रा./100 ग्राम कटेचोल के समकक्ष), टेन्नीन और फ्लावनोइड की मात्रा भी अधिक थी 7.23 कि.ग्रा./100 ग्राम टेनिन एसिड के समकक्ष 4.76 मि.ग्रा./100 ग्राम कुरेसेटिन के समकक्ष क्रमशः) पाई गई।

परिणाम से पता चलता है कि यह खेती उद्यानिकी के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है और किसानों के लिए लाभकारी हो सकती है। यह आधुनिक खेती उन किसानों के लिए फायदेमंद हो सकती है जहाँ पानी की कमी की समस्या है। साथ ही यह खेती उन लोगों के लिए भी फायदेमंद हो सकती है जो इनडोर खेती प्रणाली में रुचि रखते हैं। ■

लाभकारी

प्रो-ट्रे में नर्सरी के लाभ

- बीज का अच्छा अंकुरण व जमाव।
- जड़ को नुकसान पहुंचाये बिना ट्रे से निकालकर मुख्य खेत में लगाना।
- पौध को एक जगह से दूसरी जगह आसानी से ले जाना।
- खरपतवार, रोग व कीट का कम प्रकोप।
- भूजनित रोगों से मुक्ति।
- एक सामान पौध बढ़वार।
- कम लागत।
- बीज का सही मात्रा में उपयोग।
- बेमौसमी पौध तैयार करना।
- पौधों की गिनती करने में आसानी।
- मौसम के अनुरूप पौधों को कहीं भी रखना।

प्रो-ट्रे में सब्जी पौध उत्पादन

रीना कुमारी*, रमेश कुमार*, आँचल चौहान*, राजीव कुमार* और **गीता वर्मा***

सब्जियों की स्वस्थ पौध तैयार करना उच्च उत्पादन के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इससे उपज की ज्यादा प्राप्ति होती है। किसान, बड़े पैमाने पर सब्जियों की नर्सरी तैयार करते हैं। परंपरागत तरीके से नर्सरी तैयार करते हैं तो समय पर स्वस्थ पौध नहीं मिल पाती है और पौध में कीट एवं रोग के लगने की आशंका भी अधिक रहती है। इसके विपरीत प्रो-ट्रे तकनीक से सब्जी पौध उत्पादन लाभदायक सिद्ध हो सकता है। प्रो-ट्रे में पौधों की जड़ व तने की वृद्धि तेज व एकसमान होती है। इस तकनीक से पौध उत्पादन में कीट व रोग लगने की आशंका पूरी तरह मिट जाती है। इस प्रकार सब्जियों की पौध स्वस्थ व समय पर उपलब्ध हो जाती है। किसान इस तकनीक को अपनाकर संभवत: बड़े लाभ की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

प्लास्टिक की खानेदार ट्रे में पौध/नर्सरी तैयार करने की वह विधि है जिसमें मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती है। इस विधि द्वारा नर्सरी तैयार करने के लिए मृदारहित माध्यम का प्रयोग किया जाता है। टमाटर, शिमला मिर्च व खीरे की पौध प्लग ट्रे में बहुत आसानी से तैयार की जा सकती है।

प्रो/प्लग ट्रे में पौध तैयार करने का विवरण

- सबसे पहले ग्रोइंग मीडिया कोकोपीट, वर्मीकुलाइट एवं परलाइट को 3:1:1 (भार अनुसार) के अनुपात में मिलाकर प्रो-ट्रे के प्रत्येक खाने में मिश्रण को भर लेंगे।
- इसके बाद बुआई के लिए प्रो-ट्रे के प्रत्येक खाने के केन्द्र में उंगलियों के साथ एक छोटा सा 0.5 सें.मी. गहरा छेद बनाकर प्रत्येक गड्ढे में एक-एक बीज की बुआई करें।
- बीजों को बोने से पहले उपयुक्त फफूंदनाशक जैसे थीरम 2-3 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करें।
- शिमला मिर्च, टमाटर जैसी छोटी बीज वाली फसलें 1 इंच आकार की छोटी ट्रे में बोई जाती हैं जबकि कद्दूवर्गीय फसलें जैसे खीरा की बुआई के लिए 1.5 इंच के बड़े आकार के प्लग ट्रे का उपयोग किया जाता है।
- वर्मीकुलाइट की एक परत डालने के

प्रो-ट्रे में बीज बुआई

बीज जमाव के प्रो-ट्रे में कोकोपीट, वर्मीकुलाइट और परलाइट का मिश्रण

*डॉ. यशवन्त सिंह परमार औद्यागिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन औद्यागिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, थुनाग, मण्डी, हिमाचल प्रदेश

बाद हल्के फव्वारे की मदद से सिंचाई करें।

- सब्जियों के बीजों के अंकुरण के लिए 20 से 25 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान उपयुक्त होता है। यदि तापमान अंकुरण के अनुकूल है तो ट्रे को बाहर ही रखा जा सकता है। अन्यथा यदि तापमान कम है तो बीज बुआई के बाद ट्रे को अंकुरण के लिए मिस्ट चैम्बर/ पॉलीहाऊस/नेट हाउस में स्थानांतरित कर दें।
- मौसम की स्थिति के आधार पर ट्रे को दैनिक रूप से या वैकल्पिक दिनों में फव्वारे द्वारा हल्की फुहार से सिंचित करें।
- पॉलीफीड (19:19:19) का उपयोग 0.2 प्रतिशत (2 ग्रा./लीटर) छिड़काव द्वारा सप्ताह में दो बार पौधों के विकास को बढ़ाने के लिए करें।
- 98 छोटे आकार के कैविटी प्लग ट्रे का उपयोग टमाटर, शिमला मिर्च के साथ-साथ गोभीवर्गीय फसलों की बुआई के लिए किया जाता है, जबकि 50 बड़े आकार के कैविटी प्लग ट्रे का उपयोग खीरे इत्यादि के लिए किया जाता है।
- जब पौध, प्रत्यारोपण के लिए तैयार हो जाती है तो उन्हें जड़ों व ग्रोइंग मीडिया के साथ ट्रे से बाहर निकालकर मुख्य खेत में रोपाई की जाती है।

प्रो-ट्रे में उगते स्वस्थ पौधे

कठोरीकरण

पॉलीहाउस में तैयार की गई पौध को खेत में रोपण से पूर्व हार्डनिंग/कठोरीकरण की आवश्यकता होती है। हार्डनिंग कम या अधिक तापमान, तेज हवाओं, कम नमी इत्यादि के लिए होती है। हार्डनिंग के समय पौध की बढ़ोतरी रुक जाती है और यह सारी शक्ति पौध रोपण के पश्चात् फिर से बढ़ोतरी शुरू करने के काम आती है। यह निम्न तरीकों से की जा सकती है:-

सिंचाई: सिंचाई का अन्तराल बढ़ाकर, पानी की मात्रा में कमी करते हुए पौध को कठोर किया जा सकता है। लेकिन पानी का अभाव अधिक न हो।

तापमान: बाहर के तापमान का ध्यान रखते हुए पौध की अच्छी बढ़ोतरी के लिए कम या ज्यादा तापमान पर पौधों को हार्डन करना चाहिए।

खाद: पौध की हार्डनिंग के दौरान या उससे एकदम पहले खाद (खासकर नाइट्रोजनयुक्त) नहीं देनी चाहिए।

इन सभी कार्यों को एक साथ करके पौधों को अच्छी तरह हार्डन किया जा सकता है। पौधे का कठोरीकरण आमतौर पर 2-3 दिनों में पूरा हो जाता है।

कम समय में नर्सरी तैयार

अन्य सुझाव

टमाटर को बीज के साथ-साथ वनस्पति प्रसार (स्टेम कटिंग) के माध्यम से भी स्थापित करें। इसके लिए 10-15 सें.मी. तना काटकर उसे मिट्टी या प्लग ट्रे में जड़ विकास हेतु रोपित करें। जड़ों का विकास होते ही पौधों को खेत में रोपित करें। ■

बचाव

बागवानी फसलों में चूहों से होने वाले नुकसान की रोकथाम

विपिन चौधरी*

पश्चिमी राजस्थान में चूहों की 18 प्रजातियां पायी जाती हैं, परन्तु खेतों, खलिहानों, फलोद्यानों आदि में इनकी 4-5 प्रजातियां प्रमुख रूप से हानिकारक हैं। खेतों मे रहने वाले मैदानी चूहे बीज, पौधे, फूल, फल, सब्जियां व अनाज को हर स्तर पर नुकसान पहुँचाते हैं। मानसून का मौसम चूहों के प्रजनन हेतु अनुकूल होता है। लगभग सभी फलों तथा सब्जी फसलों में चूहों का प्रकोप निरंतर बना रहता है। फसली क्षेत्र में जुताई, सिंचाई जैसी कई प्रकार की क्रियायें होती रहती हैं इसलिए चूहे खेत से हटकर मेड़ों या आसपास के खाली पड़े खेतों या परत भूमि में स्थानान्तरित हो जाते हैं और इन क्षेत्रों में रहकर मुख्य फसल को बर्बाद करते हैं। इसी प्रकार फलोद्यानों व नर्सरी में भी चूहों का प्रकोप बना रहता है जिससे सब्जी तथा उद्यानिकी फसलों में काफी नुकसान होता है।

अक्सर देखा गया है कि किसान खेतों में चूहों की उपस्थिति को अनदेखा कर देता है और नतीजा यह होता है कि चूहों की संख्या दिनों-दिन बढ़ती रहती है और ऐसी स्थिति आ जाती है जब नुकसान रोकने के सारे उपाय विफल रहते हैं। इसलिये चूहों की समस्या से निपटने के लिए उचित समय पर कार्यवाही करना अत्यन्त आवश्यक है।

क्षति

चूहों द्वारा विभिन्न प्रकार की सब्जियों जैसे, टमाटर, गाजर, मूली इत्यादि में 15-30 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। कद्दूवर्गीय की फसलों में 4.0 प्रतिशत तक का नुकसान देखा गया है। इसी प्रकार बेर, अनार, खजूर इत्यादि में चूहों द्वारा बहुत नुकसान होता है। एक अनुमान के अनुसार गिलहरी द्वारा पके अनार फलों में 29 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। खजूर में परिपक्व अवस्था में गिलहरी द्वारा 60-80 प्रतिशत तक का नुकसान होता है।

चूहों की प्रमुख हानिकारक प्रजातियां

- **भारतीय जरबिलः** यह चूहा पर्वतीय क्षेत्रों को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में मिलता है तथा प्लेग बेसिलस का नैसर्गिक भण्डार माना जाता है। यह एक रात्रिचर चूहा है, तथा सभी प्रकार की फसलों, चरागाह, वन वृक्ष, रोपण फसलों आदि को नुकसान पहुंचाता है। मादा साधारणतया वर्ष भर बच्चे देती है तथा एक बार में लगभग एक से दस शिशु पैदा होते हैं।

अनार में चूहों द्वारा नुकसान

- **गिलहरीः** ये दिनचर होती हैं। बाग, बगीचों, सब्जी के खेतों एवं मानव बस्ती के पास पेड़ों एवं मकानों की दरारों इत्यादि में रहती हैं इनका प्रजनन काल साधारणतया मार्च से सितम्बर तक होता है। यह फलों की प्रमुख शत्रु है।
- **भारतीय मरुस्थलीय जरबिलः** यह भी दिनचर प्रवृति का चूहा है एवं घने, गहरे व लम्बे चौड़े क्षेत्रों में बिल बनाता है। यह अधिकतर घास के मैदान, बंजर एवं परती भूमि में रहना पसंद करता है। शुष्क क्षेत्रों में बेर के बगीचों में भी इनका प्रकोप अधिकाधिक देखा गया है। यह सालभर प्रजनन करता है तथा मादा एक बार में 1 से 9 शिशु देती है।
- **नर्म रोम वाला मैदानी चूहाः** यह रात्रिचर है तथा सीधे एवं गहरे बिल बनाता है। राजस्थान में यह अधिकतर मार्च से सितम्बर तक बच्चे देता है।
- **मैदानी चुहियाः** यह चुहिया संपूर्ण भारत में पायी जाती है तथा मुख्य रूप से सिंचित क्षेत्रों में पायी जाती है। यह

चूहों द्वारा हानि

पौधशाला मेंः बोए हुए बीजों को निकालकर खा जाना; भारतीय जरबिल, गिलहरी व भारतीय मरुस्थलीय जरबिल आदि।

छोटी-छोटी कोमल अंकुरों को कुतर डालना; भारतीय जरबिल, व भारतीय मरुस्थलीय जरबिल आदि।

उद्यान मेंः जड़ से पौधे को काट डालना; भारतीय जरबिल, व भारतीय मरुस्थलीय जरबिल आदि।

पौधों की छाल को नष्ट करना (भारतीय जरबिल, व भारतीय मरुस्थलीय जरबिल)

फलों मेंः गिलहरी पेड़ों पर लगे फलों को नष्ट करती है व अन्य चूहे जो जमीन पर रहते हैं जमीन की सतह से लगे फलों को नष्ट करते हैं

*अखिल भारतीय कशेरुकी नाशी जीव नियंत्रण नेटवर्क परियोजना, केन्द्रीय रुक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

ककड़ी में चूहों द्वारा नुकसान

फसल बुआई से पूर्व तथा पुनः फसल पकते समय व आवश्यकतानुसार। आमतौर पर चूहे शंकालु प्रकृति के होते हैं इसलिये चूहानाशी विष आसानी से नहीं खाते। विष को निश्चित मात्रा मे खाद्य पदार्थ या खाद्यान्नों मिलाकर चुग्गा बनाना पड़ता है। प्रबंधन कार्यक्रम को प्रभावी बनाने के लिए खासतौर पर जिंक फॉस्फाइड विष चुग्गे से पहले चूहों को सादा (प्रलोभन) चुग्गा खिलाया जाता है, सादा चुग्गा बनाना बहुत ही आसान है। मैदानी चूहों को बाजरा, गेहूं, ज्वार आदि के दानें खाने की आदत होती है। अतः इन खाद्यान्नों मे ही चुग्गा बनाया जाता है। उत्तर- पश्चिमी भारत मे पाये जाने वालो चूहों की प्रजातियां बाजरे के बीज खूब पंसद करती हैं। सादा चुग्गा बाजरे

तकरीबन सभी फसलों को नुकसान पहुंचाती है, रात्रिचर है तथा छोटे छोटे व कम गहरे बिल बनाती है। इनका प्रजनन काल मुख्य रूप से सितम्बर से अक्टूबर तथा फरवरी से मार्च के मध्य देखा गया है। एक प्रजनन में 6-13 शिशु पैदा होते हैं।

चूहा प्रबंधन

चूहे मेड़ों पर बिल बना कर रहते हैं इसलिये यदि संभव हो तो खेतों की मेड़ों की ऊंचाई तथा चौड़ाई कम से कम रखनी चाहिये जिससे चूहे उस पर बिल न बना सकें। इसी प्रकार खरपतवार तथा पिछली फसल के कचरों मे चूहे न केवल सुरक्षित रहते हैं बल्कि मुख्य फसल तैयार होने तक उस पर जीवनयापन भी करते हैं। इसलिये खतपतवार नियंत्रण द्वारा स्वच्छ बागवानी अपनाकर चूहों की संख्या मे कमी की जा सकती है।

फल बागानों में, जहां गिलहरी एक प्रमुख समस्या है, चूहा पकड़ने वाले पिंजरों का उपयोग किया जा सकता है। चूंकि गिलहरी पिंडों पर घोंसला बनाकर रहती है, इसलिए फलीय पौधों में पुष्पण की अवस्था से ही गिलहरी के घोसलों को नियमित रूप से नष्ट करना चाहिए। खजूर को इनके आक्रमण से बचाने के लिए फलगुच्छों को लोहे की जाली की थैली बनाकर ढक देना चाहिए।

चूहा प्रबंधन की सबसे कारगर विधि है चूहानाशी दवाओं का प्रयोग। यह विधि सभी फसलों मे अपनाई जा सकती है। इनमें दो प्रकार की दवाएं, जिंक फॉस्फाइड तथा ब्रोमोडियोलोन प्रमुख रूप से उपयोगी हैं। फसल में विष द्वारा नियंत्रण कार्यक्रम कम से कम दो बार करना चाहिये, प्रथम बार

सारणीः विभिन्न बागवानी फसलों में कृतंकों द्वारा क्षति

बागवानी फसलें	**क्षति प्रतिशत**	**क्षति हेतु उत्तरदायी कृतंक प्रजाति**
	सब्जी की फसल में क्षति	
टमाटर (लाइकोपर्सिकम एस्कुलेंटम)	2.6-37.3	बीबी, टिआई, एमएम, एमपी, टिआई, एमएच, एमएम (शुष्क क्षेत्र)
नेल नोल (ब्रेसिका ओलेरासिया की. गोंग्यलोड्स)	2.0-6.0	बीबी, टिआई
टालू (सोलेनम ट्यूब्रोसम)	5.0 (पौध) 3.5-9.0	बीबी, ,एमएम, टिआई, बीबी, एमपी टिआई,
मटर (पाइसम सैटिवुम)	1.8-8.0	बीबी, आरएम,एमएमस,एमबी, आरआर, जीई, एमएच, टिआई (शुष्क क्षेत्र)
बंदगोभी (ब्रेसिका ओलेरासिया की. कैपिटाटा)	5.5	एमएमस,एमबी, आरआर, जीई, बीबी
बैंगन (सोलेनम मेलोंगेना)	2.0-6.0	बीबी
फूल गोभी (ब्रेसिका ओलेरासिया)	2.3-13.9	बीबी,एमएमस,एमबी, एमएम, आरआर, टिई,
गाजर (डौकस केरोटा)	4.0-11.0	बीबी,एमएम, टिई, एमपी
खीरा (कुकुमिस सैटिवा)	4.8-19.9	बीबी, एमएम, टिई
फ्रेंच बीन्स (फेजोलस वल्गरिस)	4.0-7.0	बीबी, एमएम, टिई, एमपी
लौकी (लेगेनेरिया सिसेरिया)	4.0-14.6	बीबी, एमएम, टिई, एमएच
चुकंदर (बीटा वल्गरिस)	4.0	बीबी, टिई, एमपी
तोरई (लफा एक्यूटांगुला)	10 प्रतिशत तक	बीबी, एमएम
शकरकंद (इपोमिया बटाटस)	3.0-9.0	बीबी, एमएम, टिई
तोरई (लफा सिलेंडरिका)	9.8	बीबी, टिई
मिर्च (कैप्सिकम एनम)	0.6-11.7	बीबी, एमपी, एमबी, एमएम, आरआर, टिई
ल्यूर्सन (मेडिकैगो सैटिवा)	5.0	बीबी, एमएम, टिई
	फलों में क्षति	
तरबूज (साइट्रुलस वलगरिस)	9.9-19.8	बीबी, आरएम
कद्दू (कुकुर्बिता मोस्काटा)	1.4-18.4	बीबी, टिई
सेब (पाइरस मालस)	17.0-40.0	बीबी, जीई,एमबी, एमएम, आरआर
आडू (प्रूनस पर्सिका)	2.0-7.0	बीबी,एमबी, एमएमस, आरआर, जीई
बेर (जिजीफस जुजुबा)	8.0-80.0(नर्सरी)	एमएम, एफपी, टिई, एमएच (शुष्क क्षेत्र)
अखरोट (कैरी इलिनोइस)	1.6-17.4 (जड)	बीबी,एमबी, एमएमस, आरआर, जीई
चीकू (आर्कस सपोटा)	5.0-10.0	एफपीएम, बीबी, टिई
अनन्नास (आनानास कोमोसस)	2.6-44.4	बीबी, आरएम,, आरआर, आरएन
अनार (पुनीसिया ग्रेनाटा)	6.1-12.0	एफपी, एफपीएम, बीबी, टिई
खरबूजा (कुकुमिस मेलो)	5.0-11.8	बीबी, टिई,आरएम

कृंतकनाशी विष के प्रयोग के समय सावधनियां

चूहानाशी दवायें (रोडेन्टोसाइड्स) मनुष्य, पशुधन तथा अन्य पक्षियों व वन्य जीवों के लिये भी घातक होती हैं। अत: चूहा नियंत्रण कार्यक्रम मे उनके रखरखाव तथा प्रयोग में विशेष सावधानियां रखनी चाहिये।

- कोशिश यही होनी चाहिये कि चूहानाशी दवायें तथा चुग्गा ताले बंद अलमारी में रखे जाएं ताकि बच्चों की पहुंच से दूर रहें। डिब्बे में से चूहानाशी दवा निकालते समय ध्यान रखना चाहिये कि पाउडर मुंह में तथा श्वास द्वारा शरीर में प्रवेश न कर सके। चूहानाशी दवा के खाली हुए डिब्बों को नष्ट करके जमीन में दबा देना चाहिये।
- विष चुग्गा खुली जगह अथवा हवादार कमरे में ही बनाना चाहिये ताकि जहरीली गैस एक जगह इकठ्‌ठी न होने पाये।
- चुग्गा बनाने एवं बिलों में डालने हेतु प्रयोग में लाये गये बर्तन, लकड़ी की छड़ी अथवा पत्तों आदि को नष्ट कर देना चाहिये।
- पशु, पक्षियों, मुर्गियों तथा अन्य वन्य जीवों के ध्यान में रखते हुए विष चुग्गा सिर्फ बिलों के अन्दर ही डालना चाहिये। नियंत्रण कार्य के बाद सभी मरे चूहों को एकत्रित करके जमीन में गहरा दबा देना चाहिये क्योंकि इन्हें खाकर कुत्ते, बिल्ली तथा चील-कौवे अकारण ही मर सकते हैं।

मे खाद्य तेल (मूंगफली या तिल का तेल) मिलाकर बनाया जा सकता है। इसके लिये एक किग्रा बाजरे में 20-25 ग्राम मूंगफली या तिल के तेल को अच्छी तरह मिलाया जाता है। इस तरह तेल मिले बाजरे के दानों को सादा चुग्गा कहते है।

गिलहरी

सादा चुग्गे को चूहों के ताजे बिलों में 10 ग्राम प्रति बिल की दर से डालना चाहिये। दूसरे या तीसरे दिन इन्हीं बिलों में जिंक फॉस्फाइड नामक विष का चुग्गा डालना चाहिये। विष चुग्गा बनाने के लिए एक किग्रा बाजरा में 20-25 ग्राम मूंगफली या तिल का तेल अच्छी तरह से मिला लें। तत्पश्चात इसमें 20 ग्राम जिंक पाउडर भुरककर अच्छी तरह से मिला लें ताकि विष पाउडर चुग्गे की तैलीय सतह पर अच्छी तरह से चिपक जाये। विष चुग्गा बनाने से पूर्व हाथों पर दस्ताने या पॉलीथीन की थैली अवश्य पहनें ताकि विष हाथों में न लग पाये। इस तरह तैयार विष चुग्गे की लगभग 6-10 ग्राम मात्रा प्रत्येक बिल मे डाल दें। अगले दिन सूर्योदय से पहले उद्यान में घूमकर मृत चूहों को इकठ्ठा कर लें और उन्हे जमीन मे गहरा दबा दें। इस प्रकार जिंक फॉस्फाइड चुग्गे के प्रयोग से लगभग 70-75 प्रतिशत चूहों का नियंत्रण किया जा सकता है परन्तु बचे हुए चूहों का नियंत्रण पुन: इस विष द्वारा संभव नहीं रहता है क्योंकि ऐसे चूहों मे विष से प्रतिरोधकता की प्रवृति आ जाती है और वे जिंक फॉस्फाइड चुग्गे को नहीं खाते हैं। ऐसी स्थिति मे हमें दूसरे प्रकार का चूहानाशी विष प्रयोग करना चाहिये। इसके लिए पहले इस क्षेत्र के सभी बिलों को पुन: बंद करें और दूसरे दिन खुले बिलों मे ब्रोमोडियोलोन नामक दवा का चुग्गा 15-20 ग्राम प्रति बिल की दर से डालें। ब्रोमेडियोलोन दवा का चुग्गा बाजार मे बने-बनाये चुग्गे या मोम की टिकिया के रूप मे मिलता है। किसान इस दवा का सान्द्र पाउडर बाजार से खरीदकर उसका चुग्गा स्वयं भी बना सकते हैं। एक किग्रा बाजरे में 20 ग्राम खाने का तेल अच्छी तरह से मिला लें। तत्पश्चात इसमें 20 ग्राम ब्रोमेडियोलोन सान्द्र पाउडर मिलाकर इस दवा का चुग्गा बनाया जा सकता है। इस प्रकार जिंक फॉस्फाइड तथा ब्रोमोडियालोन के क्रमवार प्रयोग से चूहों को प्रभावी तरीके से नियंत्रित किया जा सकता है। चूहानाशी दवाओं के प्रयोग की विधि केवल मैदानी चूहों के लिए अपनाई जाती है जहां विष चुग्गे की संस्तुत मात्रा कागज की पुड़िया में बांधकर बिल के अंदर गहराई में धकेल देते हैं ताकि अन्य कोई जीव इसे न खा सकें। ■

ईसबगोल की उन्नत खेती

अनुपम तिवारी*

ईसबगोल '*प्लाटैगो ओवेटा*' प्लाटैगिनेसी कुल की एक महत्वपूर्ण औषधीय फसल है। इसे अंग्रेज़ी में *ब्लॉन्ड साइलियम व स्पोजल सीड*, हिंदी में ईसबगोल व ईसबगुल, संस्कृत में ईसबगुलं व स्निग्धाबीजम एवं गुजराती में उधामजेरू नाम से जाना जाता है। इसके अन्य नाम फलीसीड एवं प्लाटैन सीड है। विश्व में इसके प्रमुख उत्पादक देश ईरान, इराक, भारत, फिलीपीन्स इत्यादि हैं। भारत में इसका उत्पादन प्रमुख रूप से गुजरात, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश में किया जाता है। भारत, विश्व में ईसबगोल के उत्पादन एवं क्षेत्रफल में अग्रणी है।

ईसबगोल, भारतीय चिकित्सा पद्धति (आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध तथा होम्योपैथी) में उपयोग होने वाली एक महत्वपूर्ण औषधि है। ईसबगोल के सूखे बीज एवं भूसी को मुख्य रूप से पेट के विकार, त्रिदोष, जलन, कब्ज, गला बैठना, जठरशोथ, पुराने दस्त, पेचिश के उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है।

उन्नत किस्में

गुजरात ईसबगोल-1, गुजरात ईसबगोल-2, गुजरात ईसबगोल-3, जवाहर ईसबगोल-4, हरियाणा ईसबगोल-5, निहारिका, मयूरी एवं वल्लभ ईसबगोल-1 आदि।

*असिस्टेंट प्रोफेसर, उद्यान विज्ञान विभाग, जनता वैदिक कॉलेज, बड़ौत, बागपत-250611

जलवायु एवं मृदा

यह एक ठण्डी एवं शुष्क जलवायु वाले रबी के मौसम में उगायी जाने वाली फसल है। इसके बीज के जमाव हेतु 20-35° सेंटीग्रेड एवं फसल परिपक्वता के समय 30-35° सेंटीग्रेड तापमान इष्टतम होता है। यह 500 से 1250 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में आसानी से उगायी जा सकती है। अधिक आर्द्रता एवं नमीयुक्त जलवायु में इसकी खेती नहीं करनी चाहिए।

इसकी खेती के लिए 7.2-7.9 पी.एच. मान वाली बलुई दोमट मृदा उपयुक्त रहती है। मृदा, जीवांश पदार्थों से समृद्ध, अवांछनीय पदार्थों से मुक्त एवं उचित जलनिकास व्यवस्था वाली होनी चाहिए। औषधीय पादप होने के कारण यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि खेती के लिए प्रयुक्त मिट्टी में किसी भी प्रकार का अंतर्निहित कीटनाशी अथवा रोगनाशी रसायनों का संदूषण या संभावित संदूषण की आशंका ना हो।

खेत की तैयारी

ईसबगोल की खेती के लिए खेत को पहले 2-3 बार डिस्क हैरो या देसी हल द्वारा जुताई कर अच्छी तरह पाटा चलाकर समतल करके तैयार कर लेना चाहिए। पहली जुताई के बाद खरपतवारों, कंकड़-पत्थरों एवं पुरानी फसल के अवशेषों को खेत से हटा देना चाहिए। अच्छी उपज के लिए गोबर की सड़ी हुई खाद 10-15 टन प्रति हैक्टर दूसरी व तीसरी जुताई के बीच खेत में मिला देनी चाहिए। सिंचाई की सुविधा के लिए मिट्टी के प्रकार और ढलान के आधार पर पूरे क्षेत्र को उपयुक्त आकार के छोटे-छोटे भूखंडों में विभाजित किया गया है। हल्की मिट्टी के लिए 8-12 मीटर × 3 मीटर आकार के भूखंड उत्तम पाये गए हैं।

बुआई

इसकी बुआई के लिए बीजदर 4-5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर है। बीज अच्छी गुणवत्ता

सारणी: पोषण मूल्य (यूएसडीए पोषक तत्व डेटाबेस के अनुसार)

ईसबगोल के बीज		ईसबगोल की भूसी (प्रति 100 ग्राम)	
पोषक तत्व	मात्रा	पोषक तत्व	मात्रा
ऊर्जा	4.75 किलो कैलोरी/ग्राम	ऊर्जा	375 किलो कैलोरी/ग्राम
प्रोटीन	17.40 प्रतिशत	प्रोटीन	5 ग्राम
वसा	6.70 प्रतिशत	वसा	6.25 ग्राम
लिनोलिक एसिड	40 प्रतिशत	कार्बोहाइड्रेट	75 ग्राम
कुल डाइटरी फाइबर	24.60 प्रतिशत	फाइबर	10 ग्राम
अघुलनशील फाइबर	19.60 प्रतिशत	आयरन	50 मि.ग्रा.
घुलनशील फाइबर	5 प्रतिशत	कैल्शियम	1.8 मि.ग्रा.
ट्राईग्लिसराइड्स	10-20 प्रतिशत	पोटेशियम	262 मि.ग्रा.

वाले, कीट एवं रोगों से मुक्त होने चाहिए। बुआई का उचित समय अक्टूबर-दिसम्बर है। बुआई से पूर्व बीजों को डाइफेनकोनाजोल की 2 ग्राम मात्रा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। इसकी 30×5 सें.मी. के पौधान्तरण पर बुआई की जाती है। बीजों को 2.5 सें.मी. गहराई में बोना चाहिए। इसके बीज बहुत छोटे होते हैं इसलिए इन्हें मिट्टी या छनी हुई गोबर की खाद के साथ मिलाया जाता है। इससे ये बुआई के समय बराबर मात्रा में वितरित हो जाते हैं। बुआई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। यदि बुआई के 6-7 दिनों बाद अंकुरण कम हो तो दूसरी सिंचाई करनी चाहिए।

पोषक तत्व प्रबंधन

अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 10-15 टन जैविक खाद को दूसरी व तीसरी जुताई के बीच खेत में मिला देना चाहिए। ईसबगोल को नाइट्रोजन की बहुत कम मात्रा की आवश्यकता होती है। इसलिए, अकार्बनिक नाइट्रोजन का प्रयोग तब किया जाना चाहिए जब मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन की मात्रा 120 किग्रा प्रति हैक्टर से कम हो।

जल प्रबंधन

वर्षा आधारित खेती में, फसल की बेहतर वृद्धि और उपज के लिए 2-3 जीवन रक्षक सिंचाइयां दी जा सकती हैं। पहली सिंचाई बुआई के समय, दूसरी एवं तीसरी सिंचाई क्रमशः बुआई के 30 और 70 दिनों के बाद करनी चाहिए। अंतिम सिंचाई दुग्ध अवस्था में करना लाभदायक होता है। मिट्टी की नमी को संरक्षित करने एवं खरपतवार नियंत्रण हेतु जैविक पलवार को पंक्तियों के बीच फैलाया जाना चाहिए।

ईसबगोल के बीज

कीट नियंत्रण

माहूं (*एपिस गॉसिपी*) कीट, ईसबगोल की फसल को मुख्य रूप से नुकसान पहुंचाते हैं। इस कीट के शिशु एवं वयस्क पौधे के कोमल भाग से रस चूसते हैं जिससे पौधे मुरझा जाते हैं। ये सामान्य तौर पर बुआई के 50-60 दिनों बाद दिखाई देते हैं। इनसे बचने के लिए नीम, चित्रकमूल, धतूरा और गौमूत्र से जैव कीटनाशक तैयार कर जरूरत पड़ने पर छिड़काव करना चाहिए। एजाडिरेक्टिन 1 प्रतिशत और फ्लेवेनॉइड्स 6 प्रतिशत के 2-3 छिड़काव करने पर भी इनका नियंत्रण किया जा सकता है। ईसबगोल की फसल को सफेद गिडार एवं दीमक कीट भी नुकसान पहुंचाते हैं। दीमक प्रभावित क्षेत्रों में 500 किलो अरण्डी की खली प्रति हैक्टर की दर से अन्तिम जुताई के समय भूमि में मिला देनी चाहिए। उपरोक्त विधियों को अपनाने के बाद भी यदि पौधों में कीट नियंत्रित न हों तो विषयवस्तु विशेषज्ञ के परामर्श के अनुसार रासायनिक कीटनाशियों का प्रयोग किया जा सकता है।

ईसबगोल की भूसी

अन्तरसस्य क्रियाएं

कूंडों में बिखेरकर या कतार में बोये गये बीजों को बुआई के 25-30 दिनों बाद पौधों का आवश्यक दूरी के अनुसार विरलीकरण कर लेना चाहिए। बुआई के लगभग 20-25 दिनों बाद पहली निराई की आवश्यकता पड़ती है। प्रारंभिक अवस्था में एक निराई पौधों को खरपतवारों से मुक्त रखने के लिए पर्याप्त है। एक बार फसल स्थापित हो जाने के बाद खरपतवार अधिक नुकसान नही पहुँचा पाते हैं।

ईसबगोल की कटाई की अवस्था

रोग प्रबंधन

मृदुरोमिल आसिता, ईसबगोल में लगने वाला एक प्रमुख रोग है यह *पेरोनोस्पोरा प्लाटैजिनिस* के कारण होता है। इसमें कुछ अन्य कवकजनित रोग जैसे झुलसा एवं चूर्णिल आसिता का भी प्रकोप होता है। कभी-कभी आर्द्रगलन रोग एवं उकठा रोग द्वारा भी नुकसान की आशंका रहती है। इन सभी कवकजनित रोगों से बचाव हेतु बीजों को बुआई से पूर्व डाइफेनकोनाजोल की 2 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। ईसबगोल एक औषधीय फसल है इसलिए जहां तक हो सके रासायनिक रोगनाशियों के उपयोग से बचना चाहिए।

कटाई एवं उपज

बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए फसल की कटाई सही अवस्था में की जानी चाहिए। ईसबगोल की फसल बुआई के 110 से 120 दिनों बाद फरवरी-मार्च में कटाई के लिए तैयार हो जाती है। पुष्प आने के लगभग 60-70 दिनों के बाद जब पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं तथा निचली पत्तियाँ सूखने लगती हैं व बालियां भूरी लाल दिखाई देने लगे, फसल को दरांती से काटकर जमीन पर सूखने के लिए रख दिया जाता है। ईसबगोल की कटाई शुष्क मौसम में की जानी चाहिए। तदोपरांत मड़ाई-औसाई करके बीजों को अलग कर अच्छी तरह से सुखाकर संग्रहीत कर लिया जाता है। उपज किस्म, मौसम एवं फसल प्रबंधन पर निर्भर करती है। सामान्यता एक हैक्टर से 9-15 क्विंटल तक बीज प्राप्त होते हैं। भूसी एवं बीज का अनुपात 25:75 होता है। ■

जुलाई-अगस्त माह के बागवानी कार्य

हरे कृष्णा*, अरविंद कुमार सिंह, नृपेन्द्र विक्रम सिंह*** और पुष्पेंद्र प्रताप सिंह******

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में वर्षा ऋतु में जल, कृषि की अधिकतर जलसंबंधी आवश्यकताओं को पूर्ण करता है। यह ऋतु कृषि के लिए वरदायी है। इस ऋतु में जल के सभी प्राकृतिक स्रोत जैसे नदियां, तालाब, गड्ढे आदि का पुनर्भरण हो जाता है और ग्रीष्म के ताप से धरा भी तृप्त हो जाती है। जुलाई-अगस्त (सावन-भादो) में होने वाली वर्षा, पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों से लेकर मनुष्य सभी में उल्लास और उत्साह का संचरण कर देती है। वर्षाकाल में पेड़-पौधे हरे-भरे हो जाते हैं। वर्षाजल से उनमें नवजीवन का संचार होने लगता है। अतः बागों में खरपतवार भी बहुतायत में हो जाते हैं। अनुकूल तापमान और आर्द्रता के कारण, इस ऋतु में कीटों और व्याधियों का प्रकोप भी अधिक हो जाता है। अधिक आर्द्रता के कारण, यह द्विमाही फलों के कायिक प्रवर्धन के लिए भी सर्वोपयुक्त है।

भारतीय मौसम विज्ञान विभाग के अनुसार इस वर्ष सामान्य से अधिक वर्षा रहने की संभावना है। अतः वर्षाजल के बागों में ठहराव को रोकने के समुचित प्रबंधन करने होंगे ताकि जड़गलन की समस्या से निजात पाया जा सके। अतः इस ऋतु में बागों से जल निकासी, सदाबहार फलों के नए बागों को लगाने व उनके प्रवर्धन, कीट व व्याधि से बचाव एवं खरपतवारों को निकालने जैसे कृषि-कार्यों को प्राथमिकता देनी चाहिए। इस ऋतु में, आंवले और बेर जैसे फल वृक्ष ग्रीष्म-सुषुप्तावस्था को पूर्ण कर नयी वृद्धि करते हैं। इसके अतिरिक्त इस द्विमाही में आम, खजूर, नीबू, अंगूर, सेब इत्यादि फलों को बाजार भेजने की व्यवस्था भी करनी होती है। विभिन्न फल-वृक्षों के बागों में इस द्विमाही में किए जाने वाले कृषि कार्यों का समुचित विवरण प्रस्तुत है।

आम

जुलाई में मध्यम पकने वाली किस्मों के फलों को तोड़कर बाजार भेजने की समुचित व्यवस्था करें। फलों को 10 मि.मी. डंठल के साथ प्रातःकाल अथवा संध्याकाल में तोड़ना चाहिए। तुड़ाई के तुरंत पश्चात डिसैपिंग (डंठल से निकलने वाले स्राव को पृथक करना) करना चाहिए इससे फलों की गुणवत्ता बनी रहती है। तुड़ाई के उपरांत फलों को छायादार स्थान पर रखकर अथवा पानी में डुबोकर पूर्व-शीतन करें ऐसा करने से फलों में निहित प्रक्षेत्रीय ऊष्मा को दूरकर उनकी निधानी आयु बढ़ायी जा सकती है। तदोपरांत फलों का श्रेणीकरण कर एवं कटे-फटे खराब फलों को अलग कर लेना चाहिए। तीन सौ ग्राम से अधिक वजनी फलों को ए प्लस श्रेणी में जबकि 250-299 ग्राम के फलों को ए श्रेणी, 200-249 ग्राम को बी श्रेणी, 150-199 ग्राम को सी श्रेणी तथा 150 ग्राम से छोटे फलों को डी श्रेणी में वर्गीकृत करें। फलों के परिपक्वन में एकरूपता लाने के लिए उन्हें ईथरेल 700 पीपीएम + कार्बेण्डाजिम 500 पीपीएम के 52+1 डिग्री सेल्सियस गुनगुने पानी के घोल में 5 मिनट के लिए उपचारित करना चाहिए।

डाल पर लदे आम

बौनी किस्मों में फसल की तुड़ाई सिकेटियर द्वारा तथा **ओजस्वी** किस्मों में 'मैंगो हार्वेस्टर' का उपयोग करना चाहिए। फलों को बांस की टोकरियों, प्लास्टिक क्रेट्स या कार्टन के बक्सों में पैक करके बाजार भेजा जा सकता है। बांस की टोकरियों में फल डालने से पूर्व उनमें कागज, जूट के बोरे या अन्य किसी उपयुक्त पैकिंग वस्तु से तह लगा दें ताकि फलों को घर्षण से कोई क्षति ना हो। कार्टन के बक्सों में ऊर्ध्वाधर विभाजकों एवं पार्श्व संवातन छिद्रों की व्यवस्था होनी चाहिए।

तना छेदक और पत्तियों को हानि पहुंचाने वाले कीटों से रोकथाम के लिए डेल्टामेथ्रिन (0.2 प्रतिशत) अथवा मोनोक्रोटोफॉस (0.05 प्रतिशत) का छिड़काव करें। जुलाई के दूसरे पखवाड़े में फलों की तुड़ाई के बाद प्रति वृक्ष 500 ग्राम की दर से नाइट्रोजन देनी चाहिए। एन्थ्रेक्नोज (श्यामव्रण) से बचाव के लिए 0.125 प्रतिशत (125 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) ब्लिटॉक्स के घोल का छिड़काव करें।

यदि बरसात पर्याप्त हो तो मई-जून में खोदे गए गड्ढों में रोपाई का कार्य भी इसी माह शुरू किया जा सकता है। ध्यान रहे कि रोपाई का कार्य सायंकाल अथवा जिस दिन हल्की-हल्की बरसात हो रही हो, उसी दिन करना चाहिए। आम के पौधों को प्रायः 10x10 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है, किन्तु सघन बागवानी में इसे 2.5x2.5 अथवा 5x5 मीटर (आम्रपाली) या 3x2.5 मीटर (दशहरी) की दूरी पर लगाते हैं। पूर्व में ही रोपण हेतु खुदे गड्ढे के केंद्र में कलमी पौधों को रोपित करें। रोपाई के बाद पौधों के चारों तरफ की मिट्टी को अच्छी तरह से दबा दें। ध्यान रखें कि पौधों की जड़ से लगी मिट्टी

*भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, उत्तर प्रदेश; **केंद्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र, (केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान), वेजलपुर (गोधरा), गुजरात; ***भाकृअनुप-राष्ट्रीय अनार अनुसंधान केंद्र, एनएच-65, सोलापुर-पुणे राष्ट्रीय राजमार्ग, केगांव, सोलापुर (महाराष्ट्र); ****भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मेरठ, उत्तर प्रदेश

को क्षति न हो और कलम बंधन संधि भूमि के ऊपर रहे। रोपण के तुरंत पश्चात हल्की सिंचाई करें।

नया बाग लगाते समय दो या तीन किस्मों को एक साथ लगाया जाए क्योंकि उत्तरी भारत की प्रमुख किस्मों जैसे दशहरी, लंगड़ा, चौसा और बॉम्बे ग्रीन आदि में स्व-अनिषेच्यता की समस्या पाई जाती है। जिन किस्मों में यह समस्या होती है उनके फूल के पुंकेसर द्वारा पैदा किए हुए परागकण अपने ही स्त्रीकेसर को निषेचित नहीं कर पाते, जिससे उनमें फल नहीं लगते। परंतु दूसरी किस्म के परागकण निषेचित कर देते हैं। अत: ऐसी स्थिति में एक ही किस्म का बाग लगाया जाए तो वे बाग फलरहित रह जाते हैं। इस समस्या के निवारण हेतु दशहरी के बाग में बॉम्बे ग्रीन व लंगड़ा और चौसा के बाग में दशहरी, सफेदा तथा मलीहाबादी किस्मों का लगाना ही लाभदायक रहता है। यह माह विनियर कलम द्वारा पौधों को तैयार करने के लिए सबसे उपयुक्त है।

अगस्त माह में पछेती पकने वाली किस्मों के फलों की तुड़ाई करें तथा श्यामव्रण (एन्थ्राक्नोज) से बचाव के लिए ब्लिटॉक्स का दूसरा छिड़काव करें। वृक्षों में गोंदार्ति की समस्या हो तो कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) + बुझा हुआ चूना (0.1 प्रतिशत) + बोरेक्स (0.4 प्रतिशत) मिश्रण के घोल का ऊपर से छिड़काव करें। तराई वाले क्षेत्रों में गांठ बनाने वाले कीटों (शूट गॉल मेकर) से बचाव हेतु मोनोक्रोटोफॉस (0.05 प्रतिशत) अथवा डाइमेथोएट (0.06 प्रतिशत) का छिड़काव करें। अगले वर्ष नए पौधे तैयार करने के लिए मूलवृंत हेतु फलों की गुठलियों को एकत्रित करके पौधशाला में बो दें। यदि जुलाई में किसी कारणवश विनियर कलम न की जा सकी हो तो अगस्त में कलम करना न भूलें।

अमरूद

जुलाई माह में बाग में रोपण, रिक्त स्थानों की पूर्ति एवं पौधे तैयार करें। गूटी या कलम से तैयार अमरूद के पौधों को मृदा गेंद के साथ 45x45x45 सेंमी. के पहले से खुदे हुए गड्ढों के बीचों-बीच रोपित करना चाहिए। रोपित पौधों को तुरंत सिंचित करना चाहिए, तत्पश्चात तीसरे दिन और फिर प्रत्येक 10 दिनों के अंतराल पर अथवा आवश्यकतानुसार पानी देना चाहिए।

श्यामव्रण रोग को नियंत्रित करने के लिए, कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम प्रति लीटर) का फलों पर और बोर्डो मिश्रण (3:3:50) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर) का तनों तथा पत्तियों पर छिड़काव करें। पुराने या स्थापित बगीचों में 0.3 प्रतिशत बोरेक्स का 15 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें।

बाग में कीटों का प्रकोप होने पर क्विनाल्फॉस 25 ईसी का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर या नीम के तेल का 3 प्रतिशत की दर से 21 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें। सर्दियों के मौसम वाली फसल के लिए, फूल आने से पहले 0.4 प्रतिशत बोरिक एसिड का छिड़काव करें। इससे फलों के आकार और उपज में वृद्धि हो सकती है। फलों के वर्तिकाग्र सड़न की रोकथाम के लिए कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम प्रति लीटर) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर) का फलन से पहले छिड़काव करें। हालांकि, ध्यान रखा जाना चाहिए कि कोई भी छिड़काव

केला

जुलाई में पौधों से अवांछित पत्तियों को निकाल दें। पौधों के तनों के चारों ओर यदि मिट्टी नहीं चढ़ाई गई हो तो जुलाई के प्रारंभ में यह कार्य अवश्य पूरा कर लें जिससे जल निकास का उचित प्रबंधन हो सके। जिन पौधों में फल लगे हों उन्हें बांस से बांधकर सहारा देना लाभप्रद रहता है। नए बाग लगाने का कार्य भी इस माह किया जा सकता है। इसके लिए तलवार की तरह के अंत:भूस्तारी अच्छे समझे जाते हैं। अंत:भूस्तारियों को रोग मुक्त मातृ पौधों से ही चयनित करें। भूस्तारी 3-5 माह पुराने, आकार में एक समान एवं छोटी अवधि वाली किस्मों जैसे नेन्द्रन, रस्थाली, पूवन, नेय पूवन हेतु वजन में 1-1.5 किलोग्राम के तथा लंबी अवधि वाली किस्मों, कर्पूरवल्ली व लाल केला के लिए, 1.5-2.0 किलोग्राम के होने चाहिए। यदि रोपण हेतु सूक्ष्म प्रवर्धित पौधों को लेना है तो 30 सेंमी. लंबे द्वितीयक दृढ़ीकृत, पांच सेंमी मोटाई लिए कम से कम 5 पूरी तरह से खुले हुये स्वस्थ पत्तों वाले पौधों का ही चयन करें। चयनित भूस्तारियों के किसी भी सड़े हुए भाग को हटाने के लिए सतही परतों के साथ-साथ सभी जड़ों को भी खुरच दिया जाना चाहिए। फ्यूजेरियम म्लानि रोग से बचाव हेतु रोगरोधी उपाय के रूप में 0.2 प्रतिशत कार्बेण्डाजिम के घोल में छिले हुये भूस्तारियों को 15-20 मिनटों तक डुबोकर रखें। उपचारित पौधों को रातभर छाया में रखें तथा अगले दिन रोपण करें।

केला

अमरूद

तुड़ाई के 15 दिनों से पहले नहीं किया जाय।

अगस्त माह में, फल मक्खी के प्रकोप को कम करने के लिए गिरे हुए तथा ग्रसित फलों को नष्ट कर देना चाहिए। छेदक कीटों से भी अमरूद के बागों को काफी क्षति होती है। इनसे बचाव के लिए बागों में नियमित रूप से कीटों को एकत्रित कर उन्हें नष्ट कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त, कीटनाशकों का फलन के समय या फलों के पकने से पहले छिड़काव करें। सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक, लौह, ताँबा, मैंग्नीज इत्यादि की मिश्रण का भी 2 मिलीलीटर प्रति लीटर की दर से पौधों पर छिड़काव करें। म्लानि अथवा विल्ट से पौधों को बचाने के लिए उद्यान में निरंतर साफ-सफाई करते रहें। इसके अतिरिक्त, नीम खली, जैविक खाद इत्यादि का भरपूर प्रयोग करें एवं बाग में जल निकासी की समुचित व्यवस्था सुनिश्चित करें।

पपीता

जुलाई में मैदानी क्षेत्रों के बागवान पपीते की पौध तैयार कर सकते हैं। इसके लिए अच्छी किस्म के बीजों का चयन करके उन्हें किसी कवकनाशी से उपचारित करें। उपचारित बीजों को ऊंची उठी हुई क्यारियों में बोना चाहिए। पौधशाला में बीजों/पौधों को आर्द्रपतन रोग से बचाने के लिए क्यारियों को बुआई से 15 दिन पहले ही 2.5 प्रतिशत फार्मेल्डिहाइड के घोल से उपचारित करने के 48 घंटे बाद पॉलीथीन से ढककर कीटाणुरहित कर लें। पुराने बाग खरपतवाररहित होने चाहिए तथा उनमें जल निकास की अति उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए। सड़न रोग की रोकथाम के लिए ब्लिटॉक्स (0.3 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव पौधों के तनों एवं थालों में अवश्य करें एवं पौधों के तनों के चारों ओर मिट्टी चढ़ा दें। बीजों के अंकुरण के बाद थीरम (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें। उद्यान में जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

बेल

यदि जून माह में उर्वरण का कार्य पूर्ण न हुआ हो तो शुष्क क्षेत्रों में खाद एवं उर्वरकों की पूरी मात्रा जुलाई-अगस्त माह में डालनी चाहिए। प्रत्येक पौधे में 5 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 50 ग्रा. नाइट्रोजन, 25 ग्रा. फॉस्फोरस एवं 50 ग्रा. पोटाश की मात्रा प्रतिवर्ष डालनी चाहिए। खाद एवं उर्वरक की यह मात्रा दस वर्ष तक गुणित अनुपात में बढ़ाते रहना चाहिए। इस प्रकार 10 वर्ष या उससे अधिक आयु वाले वृक्ष को 500 ग्रा. नाइट्रोजन, 250 ग्रा. फॉस्फोरस और 500 ग्रा. पोटाश के अतिरिक्त 50 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद डालना उत्तम होता है।

ऊसर भूमि में लगाये गये पौधों में प्राय: जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं। अत: ऐसे पेड़ों में 250 ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति पौधे की दर से उर्वरकों के साथ डालना चाहिये या 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का पहला पर्णीय छिड़काव जुलाई माह में करना चाहिए। जिन बागों में फलों के फटने की समस्या हो उनमें खाद एवं उर्वरक के साथ 100-150 ग्राम/वृक्ष बोरेक्स (सुहागा) का प्रयोग करना चाहिये। रोपण हेतु जुलाई-अगस्त माह अच्छा पाया गया है। पौधे लगाने के एक माह पूर्व 6-8 मीटर के अंतराल पर 75 से 100 घन सें.मी. के गड्ढे तैयार कर लेते हैं। यदि जमीन में कंकड़ की तह हो तो उसे निकाल देना चाहिए। इन गड्ढों को 20-30 दिनों तक खुला छोड़कर 3-4 टोकरी गोबर की सड़ी खाद, गड्ढे की ऊपरी आधी मिट्टी में मिलानी चाहिए। ऊसर भूमि में 20-25 कि.ग्रा. बालू तथा पी.एच.मान के अनुसार 5-8 कि.ग्रा. जिप्सम/ पाइराइट भी मिलाकर 6-8 इंच ऊँचाई तक करना उपयुक्त होता है।

बेल

खजूर

खजूर को बीज से भी तैयार किया जाता है। इसके एकलिंगी होने से बीज से तैयार किये पौधों में नर व मादा का अनुपात 50:50 रहने की संभावना रहती है। ऐसे पौधों में फल देरी से आते हैं व उपज में भी असमानता रहती है। इस कारण खजूर के पौधों का प्रवर्धन अच्छी गुणवत्ता वाले मादा मातृ वृक्षों से सकर्स (अंत:भूस्तारी) द्वारा किया जाता है। इस द्विमाही के दौरान, मातृवृक्ष से निकले भूस्तारियों में जड़ विकसित करने के लिए उन पर मिट्टी चढ़ा सकते हैं। अगले वर्ष तक अंत:भूस्तारी

आँवला

इस द्विमाही में आँवले का रस्ट रोग एक महत्वपूर्ण समस्या बन जाती है। इसके नियंत्रण के लिए, घुलनशील गंधक (0.4 प्रतिशत) या क्लोरथैलोनिल (0.2 प्रतिशत) के तीन छिड़काव एक माह के अंतराल पर जुलाई से करने पर रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है। श्यामव्रण, आँवले की पत्तियों व फलों पर अगस्त माह से दिखाई देना प्रारम्भ हो जाता है। इसके प्रबंधन हेतु, कार्बेण्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का तुड़ाई से 15 दिनों पूर्व छिड़काव करें। जुलाई-अगस्त माह में गुठली छेदक का प्रकोप भी देखा जा सकता है। इसके नियंत्रण के लिए क्विनॉल्फॉस या सेविन का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें। जुलाई-अगस्त माह में आंवला के बीजों की बुआई कर सकते हैं तथा अंकुरित पौधों को एक महीने बाद क्यारियों में स्थानांतरित किया जा सकता है जहां वो अगले वर्ष जुलाई तक प्रवर्धन के लिए तैयार हो जाते हैं।

जुलाई-अगस्त माह में ही आँवला में पैबंदी कलिकायन या विरूपित छल्ला विधि द्वारा प्रवर्धन किया जा सकता है। सांकुर शाखा का चयन ऐसे मातृवृक्ष से करना चाहिए जो अधिक फलत देने वाला हो तथा कीटों एवं व्याधियों के प्रकोप से मुक्त हो। जुलाई-अगस्त के महीने में ही कलिकायन द्वारा तैयार पौधों को 8-10 मीटर (किस्म के अनुसार) की दूरी पर उद्यान में रोपित कर सकते हैं। नाइट्रोजन की आधी मात्रा जुलाई-अगस्त के महीने में आँवला में डालनी चाहिए।

आँवला

खजूर

मातृवृक्ष से अलग करने योग्य हो जाते हैं। अलग करने के एक-दो दिन पहले खेत में पानी अवश्य लगाएँ। अंत:भूस्तारी की पत्तियों को अलग करने से पहले उनको शीर्ष भाग से लगभग 30 सेंमी. ऊपर से काट दें तथा पत्तियों की बची हुई शाखाओं को मिलाकर रस्सी से बांध दें। तत्पश्चात उसके पास की मिट्टी को हटाकर उनको मातृ वृक्ष से जोड़ के स्थान से काटकर अलग कर दें।

पूर्व में तैयार किए गड्ढों में 8×8 मीटर की दूरी पर रोपाई करें। रोपण हेतु 8-10 किलोग्राम के अंत:भूस्तारियों का चयन करना चाहिए। इस द्विमाही, खजूर में फलों की तुड़ाई का कार्य होता है। चूंकि, वर्षा प्रारम्भ होने के कारण खजूर पूरी तरह से नहीं पक पाते हैं, अत: उन्हे डोका अथवा प्रारम्भिक डांग अवस्था पर तोड़ लेना चाहिए। वातावरण में नमी के कारण तोड़े हुये फलों में फफूंद लगने की आशंका रहती है। अत: उन्हें ही प्रसंस्करण के लिए भेजना चाहिए। छुहारा बनाने के लिए पूर्ण डोका फलों को अच्छी तरह से धोने के पश्चात 5-10 मिनट गर्म पानी में उबालकर धूप में अथवा ड्रायर में 40-45 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 80-120 घंटों के लिए सुखाएं।

लीची

जुलाई में पेड़ के नीचे की जमीन को हमेशा साफ रखें एवं जल निकास की समुचित व्यवस्था करें। नए बाग लगाने एवं गूटी द्वारा पौधे तैयार करने का कार्य भी बागवान इसी माह शुरू कर सकते हैं। जुलाई में पौधों में खाद व उर्वरक की समुचित व्यवस्था करें। यदि जुलाई में गूटी ना बांधी गई हो तो यह कार्य अगस्त में समाप्त कर लें तथा बाग को खरपतवारों से मुक्त रखें।

पुराने बागों में तनाछेदक कीट की समस्या रहती है। अगस्त में इस कीट की रोकथाम के लिए अपशिष्ट जालों को साफ करें तथा तनों में किए गए सुराखों में पेट्रोल अथवा मोनोक्रोटोफॉस से भीगे रुई के फाहों को डालकर गीली मिट्टी से बंद कर दें। यदि लीची माइट का प्रकोप हो तो 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से सल्फर (गंधक) अथवा केल्थेन 3 मिली प्रति लीटर का छिड़काव करें। इन्हीं दिनों गूटी द्वारा तैयार किए गए पौधों को पौधशाला में अवश्य लगाएं।

अनार

जुलाई-अगस्त माह में पौध रोपण करना चाहिए तथा रोपण के तुरंत बाद सिंचाई कर लें। मृग बहार हेतु, अनार के पौधों में दी जाने वाली गोबर की खाद तथा फॉस्फोरस की पूरी एवं नाइट्रोजन और पोटाश की आधी मात्रा जुलाई माह में दे देनी चाहिए। खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग छत्रक के नीचे चारों ओर 8-10 सेंमी. गहरी खाई बनाकर देना चाहिए।

यदि गूटी द्वारा अनार का प्रवर्धन करना हो तो जुलाई-अगस्त माह में एक वर्ष पुरानी पेन्सिल समान मोटाई वाली स्वस्थ, ओजस्वी, परिपक्व, 45-60 सें.मी. लम्बाई की शाखा का चयन कर लेना चाहिए। चयनित शाखा से कलिका के नीचे 3 सें.मी. चौड़ी गोलाई में छाल पूर्णरूप से अलग कर देनी चाहिए। छाल निकाली गई शाखा के ऊपरी भाग में आई.बी.ए. 10000 पी.पी.एम. का लेप लगाकर नमीयुक्त स्फेगनम मौस चारों ओर लगाकर पॉलीथीन शीट से ढककर सुतली से बाँधना चाहिए। जब पॉलीथिन से जड़ें दिखाई देने लगें उस समय शाखा को काटकर क्यारी में स्थापित कर लें।

यह द्विमाही, कर्तन विधि द्वारा अनार के पौधे तैयार करने के लिए भी उपयुक्त है। तेलिया रोग से संक्रमित क्षेत्रों में मृग बहार नहीं ली जानी चाहिए, अन्यथा जुलाई से अगस्त के दौरान रासायनिक जैवनाशियों, सलिसिलिक अम्ल, बोरॉन, कैल्शियम इत्यादि का नियमित रूप से प्रयोग करना पड़ेगा। यदि उद्यान में माहू कीट का प्रकोप हो तो प्रोफेनाफॉस-50 का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अधिक प्रकोप होने की स्थिति में इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। जुलाई माह में पौधों पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का छिड़काव भी करें। अनार में फलों का फटना एक गंभीर समस्या है, यह शुष्क क्षेत्रों में अधिक होती

अंगूर

जुलाई में मध्यम या देर से पकने वाली किस्मों के फलों की तुड़ाई के बाद बाजार में भेजने की व्यवस्था करें। इस माह में फलों के फटने व सड़ने की समस्या आती है। अत: ब्लिटॉक्स (0.3 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव अवश्य करें। इसी दौरान फलों को चिड़ियों एवं बर्रों से बचाना चाहिए। फलों को चिड़ियों से बचाने के लिए चमकीले रीबन (पट्टियां) का उपयोग करना चाहिए या गुच्छों में हरी थैलियां लगा दें। बर्र के छत्तों को नष्ट करने का उपाय करें। फलों की तुड़ाई के बाद खाद व उर्वरक देने की व्यवस्था करें। अगस्त में एन्थ्रेक्नोज रोग का भय रहता है। अत: समय रहते ही इसकी रोकथाम के लिए बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें।

गुच्छों में लदे अंगूर

अनार

है। इसके प्रबंधन हेतु, नियमित रूप से सिंचाई करें एवं जिब्रेलिक अम्ल (जी.ए. 3) 15 पी.पी.एम. तथा बोरॉन 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें। अगस्त माह में हस्त बहार हेतु पौधे को पानी देना रोक दें तथा इथ्रेल का उपयोग भी करें। पौधे के चारों ओर गोबर की खाद, नीम की खली, फॉस्फोरस व पोटाश की मात्रा जड़ क्षेत्र में 8-10 सेंमी. की नालियाँ बनाकर दें।

कटहल

जुलाई में तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजने की समुचित व्यवस्था करें। बागों में समुचित जल निकास का प्रबंध होना चाहिए। नए बाग लगाने का कार्य भी इसी माह प्रारंभ कर दें। अगस्त में नर्सरी तैयार करने के लिए बीजों को फलों से निकाल कर पौधशाला में बोएं। गूटी द्वारा पौधे तैयार करने का भी यही उत्तम समय है।

लोकाट

जुलाई में काट-छांट का कार्य समाप्त कर लेना चाहिए। पेड़ों के नीचे की जमीन को साफकर बाग को खरपतवाररहित रखें। अगस्त में गूटी बांधने का कार्य समाप्त कर लें। इसी माह लोकाट के नए बाग लगाने का कार्य भी कर सकते हैं।

नीबूवर्गीय फल

जुलाई में लेमन व लाइम के फल पककर तैयार हो जाते हैं, उन्हें तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। इसी माह नया बाग लगाने का कार्य भी कर सकते हैं। कैंकर रोग से छुटकारा पाने के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) और नीम की खली (5 किलो/100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। जल निकास की उचित व्यवस्था करें। रोपाई का कार्य यदि जुलाई में न हो सका हो तो अगस्त में इसे पूरा करें। पर्णसुरंगी कीट से बचाव के लिए पौधशाला में रोगोर या मेटासिस्टॉक्स (300मि.ली./100लीटर पानी) का छिड़काव करें।

फलों का तुड़ाई-पूर्व गिरना एक गंभीर समस्या है। अतः अगस्त में 10 पी.पी.एम. 2,4डी (1 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव अवश्य करें। सितम्बर में नाइट्रोजन की तीसरी मात्रा पौधों को अवश्य दें। इन फल वृक्षों में लगभग सभी सूक्ष्मतत्वों की विशेष कमी पाई जाती है। इनकी पूर्ति के लिए जिंक सल्फेट, मैग्नीशियम सल्फेट, बोरिक अम्ल, बुझा हुआ चूना (प्रत्येक एक किलोग्राम/450 लीटर पानी) आदि के संयुक्त घोल का छिड़काव करें। इस घोल में यदि 5 कि.ग्रा. यूरिया डाल लें तो यह नाइट्रोजन की कमी को पूरा करता है।

सीताफल

जुलाई माह में अच्छी किस्म के कलमी पौधों को बागों में रोपित करें तथा सिंचाई की समुचित व्यवस्था सुनिश्चित करें। अगस्त माह में खरपतवारों को निकालने की व्यवस्था करें। इस माह में ही पलवार लगाने की भी व्यवस्था करें ताकि मृदा में नमी संरक्षित की जा सके। मूलवृंत से निकली हुई पार्श्व शाखाओं को समय-समय पर निकालते रहें तथा पौधों को

बेर

जून में काट-छांट के बाद यदि नाइट्रोजन किसी कारणवश न दी जा सकी हो तो उसे जुलाई में अवश्य दें। बाग में जलनिकास की समुचित व्यवस्था करें। पौधशाला में बीजू पौधे तैयार करने के लिए यदि बुआई न की जा सकी हो तो इसे जुलाई में अवश्य करें। यदि पेड़ों पर चूर्णिल रोग के लक्षण दिखें तो केराथेन (0.1 प्रतिशत) के दो छिड़काव अगस्त में अवश्य करें।

सेब

जलनिकास की समुचित व्यवस्था के साथ अगेती पकने वाली किस्मों को तोड़कर बाजार में भेजने की व्यवस्था करें। कज्जली धब्बा रोग का प्रकोप होने पर डाइथेन-जेड 78 (0.2 प्रतिशत) घोल का छिड़काव लाभप्रद रहता है। यदि पौधे में तना कैंकर का प्रकोप हो तो प्रभावित शाखा को थोड़े स्वस्थ भाग सहित काट कर जला दें। खुले भाग या पूरे वृक्ष पर बोर्डो मिश्रण का छिड़काव करें। इसी माह नए पौधे तैयार करने के लिए कलम चढ़ाएं। अगस्त में डिलिशियस किस्में पककर तैयार हो जाती हैं। उन्हें अच्छी एवं सुंदर पैकिंग कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। रुईया एवं संजोस स्केल आदि कीटों की रोकथाम के लिए सितम्बर में मेटासिस्टॉक्स (0.5 प्रतिशत) का छिड़काव करें। फलों को तुड़ाई-पूर्व गिरने से रोकने हेतु 20 पी. पी.एम. नेफ्थेलीन एसिटिक अम्ल (2 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव अगस्त में अवश्य करें।

सेब

सीताफल

उचित आकार देने के लिए निचली शाखाओं को 2-3 फीट तक छांट दें।

स्ट्रॉबेरी की करें रोपाई

पहाड़ों में स्ट्राबेरी के पौधे जुलाई-अगस्त में लगाए जा सकते हैं। यदि समुचित बरसात न हो तो क्यारियों में पानी की उचित व्यवस्था करें एवं सितम्बर में उचित पलवार (मल्च) की व्यवस्था करें। खेत की अच्छी तरह जुताई करके एवं गोबर आदि खाद मिला करके 6x1x15 मी. आकार की क्यारियां बना लें एवं 15x15 या 15x30 या 30x30 सेंमी. की दूरी पर पौधे लगाएं।

इसके साथ ही इस द्विमाही में बागों में किए जाने वाले कृषि कार्यों की चर्चा का समापन यहीं करते हैं। अगली द्विमाही (सितंबर-अक्टूबर) भी कृषि कार्यों की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस अवधि में जहां केले, स्ट्रॉबेरी और पपीते के नए बाग लगाने होंगे वहीं लीची, अनार, चीकू, अंगूर, सेब, आड़ू जैसे विभिन्न फलों में उर्वरण, पुष्पण तथा कीट व व्याधि प्रबंधन जैसे महत्वपूर्ण कार्य करने होते हैं। इसके अतिरिक्त, बेर व लोकाट में भी पुष्पण का ध्यान रखना होगा। इसके संदर्भ में विस्तृत चर्चा **फल-फूल** के अगले अंक में करेंगे। अत: लोकप्रिय पत्रिका **फल-फूल** से इसी प्रकार स्नेहवश जुड़े रहें। ■

नाशपाती, आड़ू, खुबानी व आलूबुखारा

नाशपाती के बीजू पौधों पर भेंट कलम जुलाई में चढ़ानी चाहिए। इसी माह आड़ू, खुबानी और आलूबुखारा आदि के फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। इन फलों में कज्जली धब्बों की रोकथाम के लिए नाशपाती एवं अन्य फलों में डाइथेन जेड-78 (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें। आड़ू, खुबानी व आलूबुखारा में भूरा सड़न रोग की रोकथाम के लिए बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें। अगस्त में नाशपाती के फलों को तोड़कर भेजने की व्यवस्था करें एवं फल सड़न रोग की रोकथाम के लिए ब्लिटॉक्स (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें।

शाखा पर आलूबखारा फल

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
के चुनिंदा हिन्दी प्रकाशन

जड़ी बूटियों की खेती

गेहूँ

वर्षा आश्रित टिकाऊ खेती — कृष्ण मुरारी सिंह 'किसान'

भूमि संरक्षण और जल समेट प्रबन्ध

बायोगैस — ओ. पी. चावला

गुलाब

फल विज्ञान

आलू की खेती

बाग प्रबंध

कृषि विपणन

आधुनिक फल उत्पादन

भैंस पालन

सब्जी विज्ञान — डा. प्रेमनाथ, विश्वम्भरशरण ब्रह्मचारी, डा. धर्मपाल सिंह

मसालों की खेती

आधुनिक कुक्कुट पालन

भारत में अंगूर
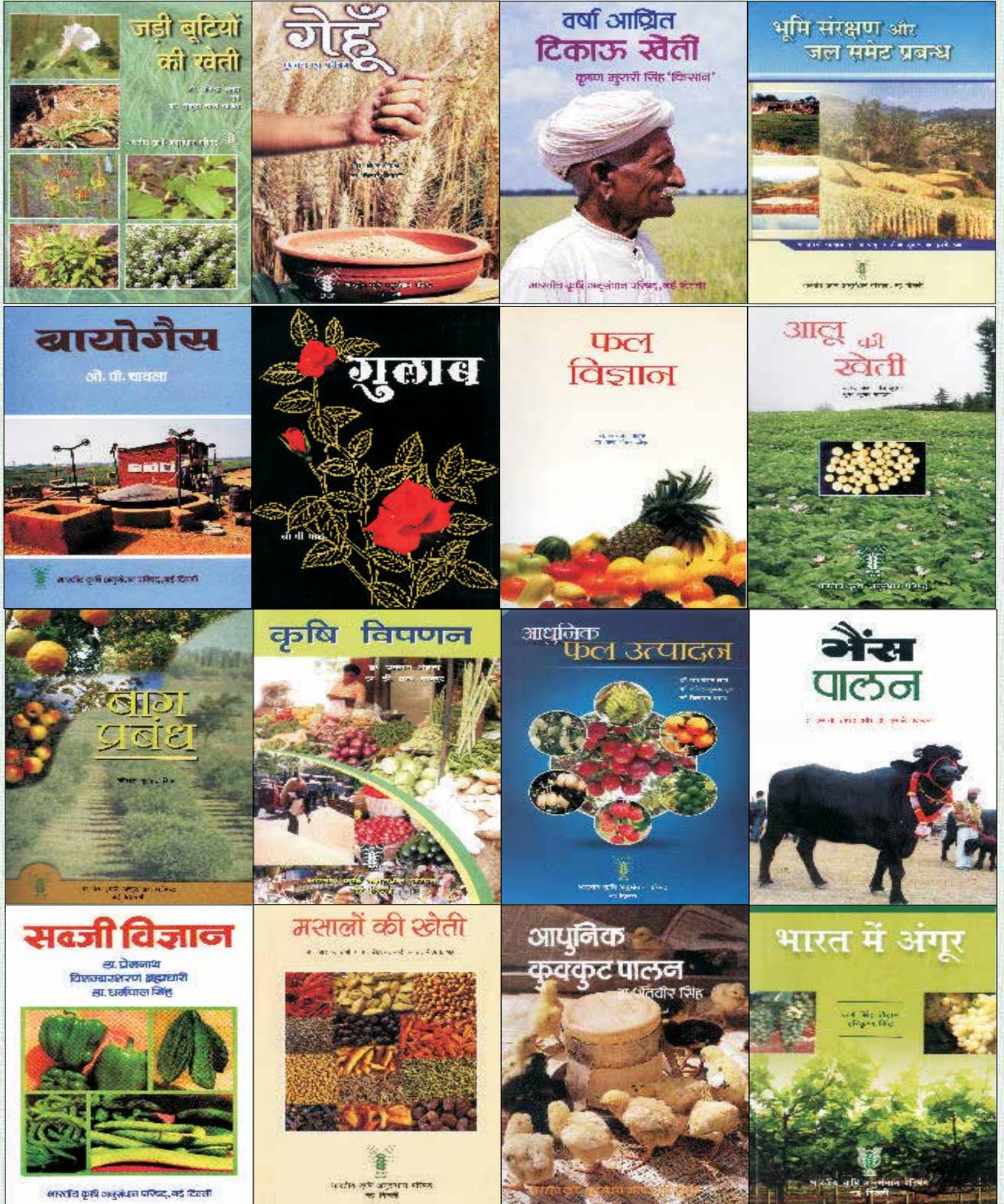
संपर्क सूत्रः प्रभारी, व्यवसाय एकक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन, पूसा, नई दिल्ली -110 012

दूरभाषः 011-25843657, E-mail: bmicar.org.in

परिषद की पत्रिकाओं की सदस्यता व नवीनीकरण हेतु फॉर्म

प्रिय ग्राहकों

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्रकाशित विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं की सदस्यता प्राप्त करने हेतु अनुरोध है कि आप पत्रिकाओं का वार्षिक सदस्यता शुल्क 'व्यवसाय प्रबंधक, भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद, नई दिल्ली' के नाम देय बैंक ड्राफ्ट या NEFT द्वारा भेजने की व्यवस्था करें। इस प्रकार आपको पत्रिकाएं सुचारू रूप से मिलती रहेंगी और आप कृषि, बागवानी, पशुपालन, मछली पालन व अन्य सम्बद्ध क्षेत्रों में किये जा रहे अनुसंधान कार्यो से विकसित उन्नत तकनीकों को अपनाकर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर अपनी आय दोगुनी कर सकेंगे। परिषद की विभिन्न चयनित पत्रिकाओं के लिए नीचे दिए गए बॉक्स में चिन्ह (✓) लगाएं। पत्रिकाओं का वार्षिक सदस्यता निम्न है:-

पत्रिकाओं का नाम	वार्षिक शुल्क
खेती (मासिक)	रु. 300 ☐
फल फूल (द्विमासिक)	रु. 150 ☐
इंडियन फार्मिंग (अंग्रेजी मासिक)	रु. 300 ☐
इंडियन हॉर्टिकल्चर (अंग्रेजी द्विमासिक)	रु. 150 ☐

रिसर्च जर्नल	व्यक्तिगत	संस्थागत
इंडियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज (अंग्रेजी मासिक)	रु. 1000 ☐	रु. 3000 ☐
इंडियन जर्नल ऑफ एनिमल साइंसेज (अंग्रेजी मासिक)	रु. 1000 ☐	रु. 3000 ☐

उपरोक्त चिन्हित (✓) पत्रिकाओं। रिसर्च जर्नल की अग्रिम धन राशि रुपये .... का एन.ई.एफ.टी./आर.टी.जी.एस. या बैंक ड्राफ्ट संख्या न. ....दिनांक............................बैंक का नाम एवं कोड...भेज रहें हैं, कृपया स्वीकार करें ।

नाम...

पूरा पता..

....

पिन कोड..................................फोन न. अथवा मोबाइल न. ....ई-मेल..

प्रकाशन मंगवाने की नियमावली

1. कृपया अपने ऑर्डर के साथ अपना नाम, पता, डाकघर आदि का पूर्ण विवरण, पिन कोड नंबर के साथ अवश्य लिखें।
2. भुगतान ''व्यवसाय प्रबंधक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली'' के नाम बैंक ड्राफ्ट द्वारा भेजें।
3. आरटीजीएस (RTGS) तथा एनईएफटी (NEFT) द्वारा ऑनलाइन अग्रिम भुगतान के लिए निम्नलिखित जानकारी देखें:-

	पुस्तकों के लिए	पत्रिकाओं और जर्नल के लिए
संस्था का नाम व पता	DKMA Revolving Fund Scheme	परियोजना निदेशक (DKMA)
बैंक का नाम	(केनरा बैंक) CANARA BANK	(केनरा बैंक) CANARA BANK
बैंक का पता	कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012	कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012
आईएफएससी कोड	CNRB0012413	CNRB0012413
एमआईसीआर संख्या	110015500	110015500
चालू खाता संख्या	24131010000043	24133050000040

PFMS Unique Code : DLND00001925 भारत सरकार एवं परिषद के संस्थानों के लिये।

नोट: कृपया एनईएफटी/आरटीजीएस से अग्रिम राशि भेजने के पश्चात हमें पत्र अथवा ई-मेल businessuniticar@gmail.com द्वारा अपने नाम व पते के साथ अपनी मांगी गई पुस्तकों, पत्रिकाओं एवं जर्नल के नाम और अवधि NEFT/RTGS नम्बर, राशि एवं बैंक का नाम इत्यादि सूचित करना आवश्यक है।

संपर्क सूत्र

प्रभारी, व्यवसाय एकक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012

दूरभाष: 91-11-25843657 (D) 25841993 (Extn. 657 & 220)

ई-मेल: businessuniticar@gmail.com

वेबसाइट: www.icar.org.in

टाइगर देखने के साथ-साथ, पर्यटक चखेंगे अदरक की बर्फी और बांस का मुरब्बा

दुधवा टाइगर रिजर्व में देश-विदेश के कई कोनों से आने वाले पर्यटकों को खाद्य प्रसंस्करण के रूप में नए उत्पादों का स्वाद मिलेगा। पर्यटक अदरक से बनी बर्फी, अचार, बांस से बना मुरब्बा और ऑर्गनिक हल्दी जैसे अनूठे उत्पादों का आनंद उठा पाएंगे। दुधवा के जंगलों और प्राणियों को देखकर लौटने वाले सैलानी इन उत्पादों को जल्द ही अपने साथ ले जा भी सकेंगे।

प्रधानमंत्री वनधन योजना के तहत उत्तर प्रदेश वन निगम द्वारा यहां के लोगों की आजीविका और जीवनशैली संवर्धन के लिए अथक प्रयास किये जा रहे हैं। इसके लिए निगम द्वारा यहां के जंगलों के आसपास रहने वाली जनजाति व वनवासियों मुख्यत महिलाओं को योजना के माध्यम से प्रसंस्करण पर आधारित प्रशिक्षण दिए जा रहे हैं। प्रशिक्षण के लिए वन निगम द्वारा दुधवा के चंदन चौकी, बेलपरसुआ,चीरियपुरवा के इलाकों में केंद्र खोले गए हैं।

इसमें जनजाति महिलाओं को अचार,मुरब्बा,अदरक की बर्फी जैसे खाद्य उत्पादों को बनाने की विधि और इन्हें बाजार में बेचने हेतु प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसके साथ ही ऑर्गनिक हल्दी उत्पादन करने की तकनीक की जानकारी भी इस योजना के अंतर्गत दी जा रही है।

खाद्य उत्पादों के साथ-साथ बांस से बनने वाले मोबाइल कवर,स्टैंड,टोकरी और जीवन शैली में उपयोग में आने वाली अन्य वस्तुओं के निर्माण पर प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

अभी तक इस योजना के तहत तीन गांव के 900 लोगों को प्रशिक्षण दिया जा चुका है। प्रत्येक केंद्र पर एक साथ 300 महिलाओं को इन उत्पादों के बनाने की विधि बताई जा रही है। केंद्र पर प्रतिभागियों को प्रशिक्षण के समय प्रत्येक दिन 150 रुपये का भुगतान भी दिया जा रहा है। यह प्रशिक्षण चार दिनों का है और इसके बाद वन निगम महिलाओं को उत्पाद बनाने के लिए सामग्री और मशीन भी उपलब्ध करवाता है। वन निगम के प्रबंधक बताते हैं कि इन महिलाओं द्वारा बनाये गए उत्पादों को निगम द्वारा बाजार में प्रचार और बिक्री हेतु भेजने की व्यवस्था की जाएगी। टाइगर रिजर्व दुधवा में आने वाले पर्यटकों के लिए इन उत्पादों की प्रदर्शनी व बिक्री की जाएगी। इससे सैलानी ये उत्पाद देश-विदेश में आसानी से लेकर जा सकेंगे और इनका लुत्फ उठा सकेंगे। ■

रंगीन सब्जियों की खेती है फायदेमंद

बिहार कृषि विश्वविद्यालय ने पिछले वर्षों में रंग-बिरंगी सब्जियां उगाकर नए-नए प्रयोग किए हैं। यहां रंग-बिरंगे खाद्यान्नों और सब्जियों की खेती शुरू की गयी है। यहां खाद्यान्नों के साथ-साथ विविध रंगों की सब्जियों की नई किस्मों को तैयार किया गया है। कहीं काला गेहूं और धान की खेती हो रही है तो कहीं जामुनी आलू की पैदावार ली जा रही है। बैंगनी, गहरी पीली, हरी और लाल रंग की पत्तागोभी किसानों को आकर्षित कर रही हैं।

इन अलग-अलग रंगों की फूलगोभी का प्रदर्शन भी किया गया था। ये विभिन्न रंगों की गोभी अनेक पोषक तत्वों से भरपूर होती हैं। पीली गोभी में केरोटीन की उच्च मात्रा (विटामिन के रूप) विद्यमान होती है तो,वहीं बैंगनी गोभी में एंथोसाइनिन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

बीएयू के सब्जी वैज्ञानिक के अनुसार कद्दू के विषय में भी यह बताया गया कि कद्दू की भी पीले और हरे रंग की किस्म पर काम हो रहा है। इसके उत्पादन को बढ़ाने पर शोध चल रहा है। इसी तरह अलग-अलग रंगों (लाल,पीले,काले एवं नारंगी) के टमाटर उत्पादन पर कार्य किया जा रहा है।

ये अलग-अलग तरह की रंगीन सब्जियां देखने में तो सुंदर लगती ही हैं, साथ ही ये विभिन्न पोषक तत्वों से भी लैस होती हैं। चिकित्सक भी खान-पान में रंगीन सब्जियों को शामिल करने की सलाह देते हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि सब्जी,फलों और खाद्यान्नों में ये विशिष्ट रंग खास पोषक तत्वों के वाहक होते हैं। ये तत्व शरीर के लिए बेहद गुणकारी भी होते हैं। ■

मशरूम नैनोपर्टिकल से कैंसररोधी दवा

गोवा में पाए जाने वाले एक खास प्रजाति के मशरूम से वैज्ञानिकों ने नैनोपर्टिकल बनाने का दावा किया है। वैज्ञानिकों द्वारा *टर्मिटोमाईसेस* प्रजाति से इस मशरूम के नैनोपार्टिकल बना लिए गए हैं। इसके साथ यह भी दावा किया गया है कि इन नैनोपार्टिकल का उपयोग कैंसररोधी दवा के रूप में किया जा सकता है। गोवा में टर्मिटोमाईसेस प्रजाति के ये मशरूम दीमक की पहाड़ियों पर ही उगते हैं। राज्य में यह मशरूम रोन ओलमी नाम से लोकप्रिय है। इस मशरूम पर शोध का प्रकाशन जर्नल ऑफ जियोमाइक्रोबायोलॉजी में किया गया है। नैनोपार्टिकल बनाने के लिए शोधकर्ताओं ने मशरूमों के दानेदार रूपों का उपयोग किया। ये नैनोपार्टिकल, कैंसररोधी दवा में भी कारगर हैं। इस शोध को करने में वैज्ञानिकों को तीन वर्षों का समय लगा और फिर इसके सफल परिणाम को गोवा सरकार के समक्ष भी प्रस्तुत किया गया है।

इस मूल्यवान मशरूम पर किया गया शोध चिकित्सा,इलेक्ट्रॉनिक्स और जल शोधन जैसे विभिन्न क्षेत्रों के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकता है। ■

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

डा. राजर्षि रॉय बर्मन, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स विबा प्रेस प्रा. लि., सी-66/3, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-II, नई दिल्ली 110 020 से मुद्रित। सम्पादकः अशोक सिंह